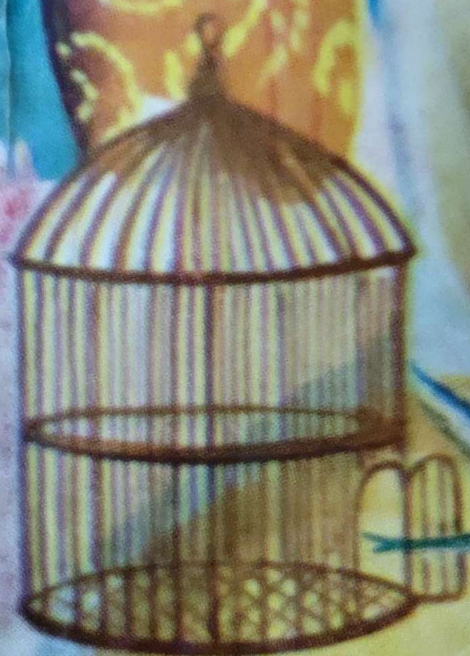
कुशवाहा 'कान्त'

बसेरा



बसेरा

S. P. B—2

तुम नाज करो शौक से हम कुछ नहीं कहते।
इस नाज पर कोई मर जाय तो क्या हो ?

"ऐसा न कहो समीम..." जयन्त विह्वल हो उठा—"मत कहो ऐसी बात। तुम्हारी सलोनी मुखाकृति ने मेरे हृदय में 'बसेरा' कर लिया है। अब ऐसी बातें कहकर मुझे दुःख न दो।"

शमीम चुप रही। उसके नेत्रों में आँसू तैरने लगे।

"शमीम !..." जयन्त ने भर्राये स्वर में पुकारा।

"मेरे सनम..." उठकर वह जयन्त से लिपट गई।

—"मुझे धोखा न देना..."

इसी उपन्यास में से

6.00


बसेरा
स्व. कुशवाहा 'कान्त'

प्रकाशक

सरस्वती पाकेट बुक्स
सी २२/११, कबीर रोड • वाराणसी -१



अक्टूबर १९८२



मुद्रक :—
विजय मुद्रणालय
सी. २२/११ कबीर रोड
वाराणसी-१

BASERA—BY, KUSHWAHA 'KANT'

कुशवाहा 'कान्त' के प्रेमी पाठकों से दो शब्द

उपन्यास पढ़ने से पहले इसे अवश्य पढ़ें।

सुप्रसिद्ध उपन्यासकार कुशवाहा कान्त का जन्म ९ दिसम्बर सन् १९१८ को हुआ था और निधन १२ मार्च सन् १९५२ को। कुशवाहा 'कान्त' का नाम आज से ३७ वर्ष पूर्व, उपन्यास लेखकों की श्रेणी में हिन्दी उपन्यास-जगत में उदित हुआ था।

उस समय उनकी सरस-सशक्त लेखनी ने हिन्दी उपन्यास-जगत में हलचल सी मचा दी थी। उनकी चार या पाँच ही पुस्तक प्रकाशित हो पाई थी, कि पाठकों के प्रशंसा के पत्र आने लगे। साथ नित्य नई रचनाओं की माँग होने लगी।

इस प्रकार कुशवाहा 'कन्त' जी का भी उत्साह बढ़ने लगा और वे एक के बाद एक नई पुस्तकें अपने पाठकों के लिए लिखते गये। उनके उपन्यास प्रकाशित होते ही हाथों-हाथ बिक जाते। धीरे-धीरे उनका नाम तथा उनके उपन्यासों की चर्चा बढ़ने लगी। साथ ही उनके सभी उपन्यासों की माँग दिन पर दिन बढ़ती गई। थोड़े से समय में उनका नाम तथा उनके उपन्यासों की माँग पूरे भारतवर्ष में बढ़ गई थी। वे अत्यधिक लोकप्रिय लेखक कहे जाने लगे थे।

वे अपने जीवन-काल में ही इतने लोकप्रिय हो गये थे, कि कुछ साहित्यकारों को उनसे ईर्ष्या होने लग गई थी। वे उपन्यास लिखने के साथ-साथ कई पत्रिकाओं का सम्पादन भी करते थे। जिनमें चिनगारी, नागिन और बिजली प्रमुख हैं। सन् १९५२ तक वे कुल ३५ पुस्तके लिख चुके थे। सभी पुस्तकें प्रकाशित भी हो चुकी थीं। अभी न जाने कितनी पुस्तकें पाठकों के सामने आतीं। पर दुर्भाग्य की बात है कि मार्च सन् १९५२ में उनका दुःखद एवं असामयिक निधन हो गया। उनके निधन से हिन्दी उपन्यास-जगत को गहरा धक्का लगा।

आज उनके निधन के ३७ वर्ष के बाद भी उनकी लोकप्रियता रंचमात्र भी कम नहीं हुई है। इसका ज्वलन्त प्रमाण है, कि कुछ स्वार्थी लोगों द्वारा उनके नाम से जाली और नकली उपन्यासों का प्रकाशन करके उनके नये प्रेमी पाठकों तथा पुस्तक विक्रेताओं को धोखा दिया जा रहा है और ठगा जा रहा है।

अतः कान्त साहित्य के प्रेमी नयी पीढ़ी के तथा पुराने पाठकों से नम्र निवेदन है कि आप इस प्रकार की जाली और नकली पुस्तकें खरीदने से बचें।

आपकी जानकारी के लिए उनके सभी सही और असली ३५ पुस्तकों के नाम नीचे दिये जा रहे हैं—

१—नीलम
२—चूड़ियाँ
३—लवंग
४—मंजिल
५—अपना-पराया
६—निर्मोही
७—भँवरा
८—कुंकुम
९—आहुति
१०—पागल
११—अकेला
१२—जलन
१३—इशारा
१४—बसेरा
१५—लाल रेखा
१६—पपिहरा
१७—पारस
१८—नागिन
१९—मदभरे नयना
२०—विद्रोही सुभाष
२१—परदेशी प्रथम भाग
२२—परदेसी द्वितीय भाग
२३—जंजीर
२४—लालकिले की ओर
२५—पराजिता
२६—उड़ते-उड़ते
२७—गोल निशान
२८—उसके साजन
२९—जवानी के दिन
३०—हमारी गलियाँ
३१—रक्त मन्दिर
३२—दानव देश
३३—खून का प्यासा
३४—काला भूत
३५—कैसे कहूँ

उपरोक्त ३५ पुस्तकों के अतिरिक्त कुशवाहा 'कान्त' की लिखि कोई भी पुस्तक नहीं है। यदि उनके नाम से उपरोक्त ३५ पुस्तकों के अलावा जो पुस्तकें आपको दिखाई दें उसे जाली और नकली समझें।

अब तक महान उपन्यासकार स्व० कुशवाहा 'कान्त' की सभी पुस्तकें पाकेट-बुक्स आकार में अप्राप्य थीं। उनके प्रेमी पाठकों के निरंतर अनुरोध पर उनकी लोकप्रिय कृतियां जो अब-तक पाकेट बुक्स आकार में नहीं छपी थीं, अब सुरुचिपूर्ण आकर्षक पाकेट बुक्स आकार में सरस्वती पाकेट बुक्स द्वारा प्रकाशित कर आप सभी प्रेमी पाठकों तक पहुंचाई जा रही है। प्रस्तुत पुस्तक उन्हीं लोकप्रिय उपन्यासों में से एक है, जो आपके समक्ष प्रस्तुत है।

सभी कान्त साहित्य के लिए चौधरी एण्ड सन्स, नीचीबाग वाराणसी तथा सरस्वती पाकेट बुक्स, कबीर रोड, वाराणसी को लिखें।

व्यवस्थापक
सरस्वती पॉकेट बुक्स
सी २२/११ कबीर रोड
वाराणसी–१

लोकप्रिय कथाकार
कुशवाहा 'कान्त'
रचित
अत्यन्त रोचक उपन्यास

१–नीलम
२–चूड़ियाँ
३–लवंग
४–मंजिल
५–अपना-पराया
६–निर्मोही
७–भँवरा
८–कुंकुम
९–आहुति
१०–पागल
११–अकेला
१२–जलन
१३–इशारा
१४–बसेरा
१५–लाल रेखा
१६–पपिहरा
१७–पारस
१८–नागिन
१९–मदभरे नयना
२०–विद्रोही सुभाष
२१–परदेशी प्रथम भाग
२२–परदेशी द्वितीय भाग
२३–जंजीर
२४–लालकिले की ओर
२५–पराजिता
२६–उड़ते-उड़ते
२७–गोल निशान
२८–उसके साजन
२९–जवानी के दिन
३०–हमारी गलियाँ
३१–रक्त मन्दिर
३२–दानव देश
३३–खून का प्यासा
३४–काला भूत
३५–कैसे कहूँ

प्राप्ति स्थान :—

सरस्वती पाकेट बुक्स
सी २२/११ कबीर रोड
वाराणसी—१

'तुरन' को

२

उसके रक्ताक्त कपोलों से टकराकर वह मुड़ा हुआ कागज निचे गिर पड़ा। वह काँप उठी, क्रोध तथा आवेश से। वह कौन है? कौन है वह जो उसे इतने आदमियों के सामने अपमानित कर रहा है? कौन है वह, जिसने उसके कोमल कपोलों को निशाना बनाकर यह कागज का टुकड़ा फेंका है? क्लब के 'हॉल' में जहाँ शहर के बड़े-बड़े रईस एवं गणमान्य सज्जन उपस्थित हैं, शिष्टता से खिलवाड़ करना कहाँ की सभ्यता है? उस आदमी में यह सोचने की बुद्धि भी नहीं, कि किसी भले घर की लड़की पर इस तरीके की बेजा निशानेबाजी करना खराब आदत है – बहुत खराब!

वह मुड़ा हुआ कागज जमीन पर गिर पड़ा था। उसने झुककर, काँपते हुए हाथों एवं क्रोधभरे चेहरे से उठा लिया, कौतूहलवश? केवल यह देखने के लिए कि आखिर उस कागज में क्या है? उसने उस मुड़े हुए कागज को सीधा किया और ध्यानपूर्वक पढ़ा। केवल इतना ही लिखा था उसमें 'मेरा जियरा बेहाल,–छोटे-छोटे, किन्तु साफ और सुन्दर अक्षरों में।

तो किसी महाशय का 'जियरा' उसके लिए बेहाल है, बेताब है–और उसी बेहाली को, उसी बेताबी को, उन्होंने इस तरीके से उस पर प्रकट करने का प्रयत्न किया है–मगर कितनी गंदी बात है यह?–कितनी बेढङ्गी हरकत है? कितनी शरारत-भरी है यह लिखावट?–उसकी क्रोधाग्नि में आहुति पड़ी। उसके होंठ फड़फड़ा उठे, आँखें रक्ताक्त हो गईं...आरक्त कपोलों पर एक क्षण के लिए पीलापन छा गया। आखिर वह कौन है, जिसने उसके साथ यह गहरा मजाक किया है!....उसने अपनी

आँखें चारों ओर घुमाईं।

उस दिन क्लब का वार्षिकोत्सव था। इस महोत्सव के शुभ अवसर पर विख्यात साधु 'सन्त सदाशिव' भाषण देने के लिए आमन्त्रित किये गये थे। भक्ति योग पर उनका अंग्रेजी में भाषण हो रहा था। शहर के सभी विख्यात रईस उपस्थित थे और चित्र-विचित्रित 'हॉल' में संगमरमर की मेजों के पास बैठे हुए विद्यावरिष्ठ सन्त सदाशिव का भाषण सुन रहे थे। कितना मार्मिक, कितना हृदयाग्राही एवं कितना वास्तविकतापूर्ण था उनका भाषण! 'हॉल' के बीच में स्थित एक ऊँचे से रङ्गमंच पर वे खड़े थे और चारों ओर घूम-घूमकर लोगों के कर्ण-कुहरों में अमृत-वर्षा कर रहे थे। उनके मुखमण्डल पर तेज था, मगर शरीर शिथिल हो चला था। आयु-भार से दबी हुई उनकी आँखें मानों प्रकाश की खोज में सन्तप्त होकर इधर से उधर भटक सी रही हों। उनका चेहरा शान्त था श्रोतागण भी शान्त थे। क्या मुसलमान, क्या ईसाई, क्या ऐङ्ग्लोइण्डियन, सभी उनकी वक्तृता ध्यानपूर्वक सुन रहे थे। उनके मुख से निकले हुए शब्द ऐसे थे, मानों फूल बरस रहे हों। वे कह रहे थे—"मनुष्य मात्र के लिए विहित, निषिद्ध और त्याज्य त्रिकर्मों का तत्वावधान करना आवश्यक है। जो व्यक्ति बिना इतना ज्ञान प्राप्त किये कर्म करने पर अग्रसर होता है, वह इस संसाररूपी जीवन-क्षेत्र में कभी सफलता प्राप्त नही कर सकता है। फल-प्राप्ति की आशा से रहित होकर जो कर्म किये जाते हैं, वह कर्म सर्वश्रेष्ठ हैं। ऐसा वही मनुष्य कर सकता है, जिसने ज्ञानाग्नि से अपनी सारी लिप्साओं का दमन कर लिया हो, समस्त आशाओं को छोड़ दिया हो, मन और आत्मा को वशीभूत कर लिया हो। दुःख सुख, हानि-लाभ से जिसके मन में वेदना न उत्पन्न होती हो, सिद्धि और असिद्धि में जिसकी समान बुद्धि रहती हो...कर्मेन्द्रिय, ज्ञानेन्द्रिय तथा प्राण-अपान आदि, पंच तत्वों के वासनामय-

घृणित कर्मों को ज्ञानाग्नि से प्रदीप्त कर जिसने उन्हें जला डाला हो, वही समस्त विषय-वासनाओं को त्यागकर पारब्रम्ह में अपनी बुद्धि, निष्ठा को लय करके ब्रम्हमय हो जाता है।"

परन्तु उसका मन भाषण सुनने में नहीं लग रहा था। वह अनमनी-सी हो उठी थी। वह सोच रही थी कि कौन है वह, जिसने उसकी सुन्दरता के साथ इस प्रकार का उपहास करने का साहस किया है?—किसी के कोमल कपोलों पर, किसी के खूबसूरत चेहरे पर कागज का टुकड़ा खींच मारना-वह भी ऐसे भरे 'हॉल' में, कितनी लज्जा की बात है? वह शर्म से गड़ी जा रही थी—कहीं किसी ने देखा तो नहीं...नहीं! किसी ने नहीं देखा था। सभी शान्त थे। जरा भी अव्यवस्था, तनिक भी विश्रृङ्खलता प्रतीत नहीं होती थी। सभी का ध्यान वक्तृता की ओर आकृष्ट था। मगर उसके दिल की बेचैनी न घटी, न वटी। उसने फिर एक बार क्रोधपूर्ण दृष्टि से चारों ओर देखा।

उसके बगल वाली मेज पर ही बैठा था जयन्त कुमार। बाईस वर्ष की अवस्था थी। हँहमुख चेहरे पर भिनती हुई मूछें बड़ी भली मालूम होती थीं। अभी अभी ही तो कालेज से निकला था वह। शहर के एक नामी रईस एवं सेठ का बेटा था। नौकर चाकर, मोटर गाड़ी थी। किसी बात की कमी नहीं थी उसे। उसकी मुखाकृति आकर्षक थी। चाल सज्जनोचित थी। इस इस समय वह स्थिर दृष्टि से साधु के मुख की ओर देख रहा था, मानों वह भी उन्हीं में लीन हो गया हो। उसके हाथ-पैर निश्चल थे, भावभंगी निश्चेष्ट थी, मुख पर उदासीनता का वातावरण व्याप्त था।

उसकी दूसरी ओर मेज पर बैठा था शिराज! शहर के एक नामी बैरिस्टर का लड़का। जयन्त का सहपाठी रह चुका था वह मगर जयन्त से उसकी जरा भी पटती न थी। वह था भी ऐसा कि देखते ही, न जाने क्यों एक विचित्र प्रकार की भावना

उत्पन्न हो जाती थी। भद्दे तरीके से कन्धे हिला हिलाकर वह बातें करता था, मगर इस समय वह भी कुर्सी पर निश्चल बैठा हुआ था।

क्लब की विशाल बिल्डिंग के बाहर जोरों की हवा बह रही थी। बादलों की गरज एवं बिजली की चमक कभी-कभी भीतर आ जाती थी। 'हॉल' की दीवाल घड़ी ने रात्रि के नौ बजा दिये थे, फिर भी बिजली के बल्बों की प्रखर ज्योति से 'हॉल' दिन सा जगमगा रहा था। हाल कि एक कोने में, एक छोटी सी मेज के पास बैठे हुए दो सभ्य पुरुष, भाषण की परवाह न कर, बात-चीत करने में तल्लीन थे—"भाई देखो तो उस 'बुत' को, बड़ी अनमनी सी मालूम पड़ती है। उचक-उचक कर इधर-उधर देख रही है ? कौन है यह ?"

"नहीं जानते तुम ? वह है इस क्लब की ब्यूटी-क्वीन मिस शमीम बानू। सूरत जितनी प्यारी है, दिल उतना ही कठोर है। उसे अपनी खूबसूरती पर नाज है—अपनी चाल ढाल पर घमण्ड है। लगभग एक महीने से क्लब में आ रही है, मगर सेक्रेटरी साहब को छोड़कर उसने किसी की तरफ आँख उठा कर देखा भी नहीं, बात करने की तो बात ही अलग !"

जी हाँ ! उसका नाम था शमीम ! फूल-सी कोमल, चन्द्रमा-सी उज्ज्वल, मधु-सी मिठासभरी एवं मदिरा-सी मादक थी वह। यौवन-मद से परिपूर्ण उसका ललितांग शरीर देखने वाले पर गजब ढाती थी। गोल-मटोल मांसल उन्नत उरोज विकसित होकर आकर्षक हो उठे थे। फिर भी वह, बड़ी 'वह' थी। व्यर्थ की बात करने की उसे आदत न थी। व्यर्थ की छेड़खानी करना उसे पसन्द न था। थी तो पढ़ी लिखी कालेज की, मगर चंच-लता उसमें जरा भी न थी। वह थी गम्भीर, शान्त ! मगर उसकी इस गम्भीरता को लोग शोखी समझते, उसकी शान्ति-प्रियता को प्रदर्शन मात्र समझते।

अपनी गम्भीरता एवं शान्ति-प्रियता के ही कारण, आज जब कि उसके कपोलों पर किसी ने शरारतभरे हाथों से कागज का एक मुड़ा हुआ टुकड़ा खींच मारा, वह विक्षिप्त-सी हो उठी। क्रोध की लालिमा उसके गालों पर दौड़ गई। वह परेशान-सी होकर इधर-उधर देखने लगी, यह जानने के लिए कि किसकी यह शैतानी है।

"क्या है?....है क्या मिस शमीम!" क्लब के सेक्रेटरी साहब जो बहुत देर से उसकी अस्थिरता लक्ष्य कर रहे थे, उठ कर उसके पास चले आये—"आप बहुत परेशान-सी दीख पड़ती हैं—क्यों? आखिर क्यों? किसलिए?"

"बात यह है...." शमीम ने चाहा कि सेक्रेटरी साहब से सारी बात बता दे, मगर...

"बात यह है सेक्रेटरी साहब...." जयन्त ने बीच ही में टोक दिया। उसके होठों पर मुस्कुराहट थी और आँखों में था शरारत का भाव। उसने एक बार अपने हाथ की जलती हुई सिगरेट का कश खींचा, फिर बड़े गम्भीर स्वर में बोला—"मिस शमीम एक बहुत ही जरूरी काम करना भूल गई हैं, इसलिए इतनी 'परप्लेक्स्ड' चिन्तित नजर आ रहीं हैं...."

"ओ...? यह बात है...." सेक्रेटरी साहब हँसे—"क्या बहुत ही जरूरी कोई काम...."

"नहीं...आप..."शमीम ने सेक्रेटरी साहब को वास्तविक बात का ज्ञान कराना चाहा, मगर जयन्त पुनः बोल उठा—"जी हाँ, काम जरूरी है, और बहुत जरूरी...."

"आई सी!....सेक्रेटरी साहब ने ऐसा भाव बनाया मानों दोनों की प्रतिकूल परिस्थितियों को समझने का प्रयत्न कर रहे हों—"आप वह काम मुझे बताइये, मिस शमीम! मैं कोई आदमी भेज कर उसे पूरा करने का प्रबन्ध...."

"मगर...." शमीम अजीब दुविधा में पड़ी हुई थी। उसका चेहरा लाल हो रहा था, आवेश से।

"नहीं नहीं ! आप 'हेजिटेशन' द्विविधा में न पड़िये, साफ-साफ वह काम मुझे बता दीजिये । मैं जरूर उसका कोई प्रबन्ध कर दूँगा, आपको जरा भी तकलीफ न होगी....मैं कहता हूं न मिस शमीम, कि आप जरा भी अव्यवस्थित न हों...."

"आप समझ नहीं रहे हैं, सेक्रेटरी साहब..."

"मैं समझ रहा हूं....समझ रहा हूं कि काम बहुत जरूरी है, मगर...."

"आप..."

"जी हां मैं !...उसे पूरा करने की कोशिश करूंगा। बताइये तो सही—"

"आप कुछ भी नहीं समझ रहे हैं–" अब तक की बातचीत से शमीम पूर्णतया ऊब चुकी थी । उसका क्रोध भी चरम सीमा तक पहुँच गया था । यही कारण था कि उसने यह बात कुछ जोरों से कही । तभी प्रेसिडेण्ट साहब का उच्च स्वर सुनाई पड़ा—"आर्डर प्लीज ?"

वातावरण शान्त हो गया । केवल सन्त सदाशिव की गम्भीर वाणी 'हॉल' में गूँज रही थी....जो प्राणी भक्तियोग में निरन्तर तल्लीन रहकर अत्यन्त श्रद्धापूर्वक जगन्नियन्ता की उपासना करता है एवं जो उसे अनुद्देश्य, अव्यक्त, सर्वज्ञ, अचिन्त्य; अचल तथा ध्रुव जानकर उसकी आराधना करता है तथा अपनी यावत् इन्द्रियों को वशीभूत करके मानव हित कार्यों में अपने तन-मन-प्राण का समावेश करता है--वही योगी है, भक्त है । जो उस जगदाधार जगदीश्वर की उपासना में तत्पर होकर, अपने संपूर्ण कर्मों को उसके चरणारविन्द पर अर्पण कर देता है एवं योग द्वारा उसका स्मरण करता है, वही शीघ्र ही इस असार संसार से विमुक्त होकर 'ब्रम्ह' में लीन हो जाता है—ब्रम्हमय होकर असीम आनन्द का उपभोग करता है–ऐसे होते हैं योगी ! भक्त !..."

सन्त सदाशिव का भाषण बहुत प्रभावशाली एवं हृदयग्राही था और उसमें दूसरे धर्मवाले भी काफी दिलचस्पी ले रहे थे। उनके मुख से निकली हुई शिथिल वाणी में इतनी दृढ़ता, इतना तेज था कि लोग अनायास ही उनकी ओर आकृष्ट होकर उनकी वक्तृता ध्यानपूर्वक सुनने में तल्लीन थे।

घण्टे भर बाद उनकी वक्तृता समाप्त हुई। उनके बैठते ही प्रेसिडेण्ट साहब उठ खड़े हुए—"लेडीज एण्ड जेण्टिलमेन!..." उन्होंने कहना शुरू किया—"अब आपके सामने मिस शमीम अपने सुरीले गले से एक गीत सुनायेंगी। आप लोग ध्यान से..."

'मैं आज पार्ट न ले सकूँगी, सर!...शमीम ने धीरे से उठकर शिष्ट भाषा मे कहने की कोशिश की, मगर भर्राई आवाज से उसके हृदय का आवेग प्रगट हो ही गया। वह अभी तक, उस बात को न भूल सकी थी और न तो उसका क्रोध एवं आवेश ही कम हुआ था।

"ऐसा न करें मिस शमीम! कितने ही ऐसे हैं, जो सिर्फ आपके प्रोग्राम का ख्याल करके यहाँ तक आये हैं, आप उन्हें निराश न करें।" प्रेसिडेण्ट साहब ने कहा।

"मुझे माफ करें मैं मजबूर हूं...."कहते हुए शमीम धम्म से कुर्सीपर बैठ गई! विवश हो प्रेसिडेंण्ट साहब ने दूसरे-दूसरे प्रोग्राम आरम्भ किए, जिनमें से जयन्त का बाँसुरी बजाना शिराज का मुँह बिगाड़ कर स्पीच देना, प्रोफेसर आर० आर० शर्मा का जिमनास्टिक प्रदर्शन, सेक्रेटरी साहब का रिपोर्ट पढ़ना एवं प्रेसिडेण्ट साहब का आगत सज्जनों को धन्यवाद देना—यही 'मेन फीचर्स' मुख्य विषय थे।

जब क्लब का यह जलसा समाप्त हुआ, उस समय रात के साढ़े दस बज गये थे। इसके बाद कुछ लोग घर चले गये, कुछ

'प्लेहाउस, में जाकर ब्रिज खेलने लगे एवं कुछ कॉमन रूम बैठकर गप्पें लड़ाने में तल्लीन हो गये।

"मिस्टर जयन्त !"

किसी ने काँपती हुई आवाज में पुकारा। जाते जाते के पैर रुक गये। वह लौट आया। देखा—कामन रूम के दरवा पर खड़ी हुई है, शमीम। चेहरा तमतमाया हुआ है। आँखों क्रोध की ललिमा उभर आई है····वह आकर उसके सामने चुप चाप खड़ा हो गया और प्रश्नसूचक दृष्टि से, हठात् किसी को आकर्षित करने वाली उसकी आकृति की ओर उसने देखा, पर क्रोध पूरी तरह से हावी हो चुका था।

"आपका इरादा क्या है, मिस्टर जयन्त ?"—उस आवाज में क्रोध को झलक थी।

"आपका मतलब ?" जयन्त के चेहरे पर हमेशा खेलत रहने वाली मुस्कुराहट दौड़ गई।

"आप मेरा मतलब खूब समझ रहे हैं···" शमीम बोली "मगर जानकर भी अनजान बनने की ऐक्टिंग करना आपको खूब आता है, यह मैं अच्छी तरह जानती हूं···"

"आप यह क्या कह रही हैं ?"

"मैं जो कुछ कह रही हूं, सब खूब समझ-बूझकर। मैं पूछती हूँ, आखिर मुझे इस तरह से परेशान करने में आपको मिलता क्या है ?"

"आप साफ-साफ कुछ कहें तो मैं समझूं भी···"

"साफ-साफ कहूं ?···यह देखिये !"—शमीम ने अपनी जाकेट की जेब से मुड़ा हुआ कागज निकाल कर जयन्त के हाथों पर रख दिया। जयन्त ने वह कागज देखा। उस पर छोटे-छोटे अक्षरों में लिखा था—'मोरा जियरा बेहाल !'

"यह तो कोई गाना मालूम होता है···"जयन्त कहने

गा—''शायद यही गाना आज आप क्लब में गाने वाली ?'''मगर गाया क्यों नहीं ? क्या तबीयत कुछ राब ?'''''

''मिस्टर जयन्त—'' शमीम का स्वर कठोर हो गया। जयन्त आंखें उसके चेहरे की ओर उठीं—''मैं कहती हूं मिस्टर त ! कि आप मेरा मजाक उड़ा रहे हैं। आप 'सीरियस' ोकर बात कीजिये। मैं मजाक से नफरत करती हूं'''''

और जयन्त को 'बनाने' का मूड छोड़कर 'सीरियस' होना ड़ा।

''इस कागज की लिखावट आपकी है, मिस्टर जयन्त। और ाप ही ने इसे मेरे गालों पर फेंक मारा था—ऐसा मेरा अन्दाज , ऐसी भद्दी हरकत आपने क्यों की ?''

''मगर मैंने'''''

''जी हाँ ! आप ही ने यह हरकत की थी, नहीं तो जब मैं क्रेटरी साहब से यह बात कहने जा रही थी, तो आप बेमौके न टोकते और न तो मेरा मजाक उड़ाते'''मेरा पक्का दाज है कि आप ही ने यह सब किया है।''

जयन्त गम्भीर हो गया। बात बढ़ती देख कर वह चुप हो हा। केवल म्लान मुख से उसने कहा—''मैं माफी चाहता हूं।''

''मगर आपने ऐसा किया ही क्यों ? कोई देख लेता तो....''

''सबकी नजर बचाकर यह कागज फेंका गया था....'' यन्त के चेहरे पर मुस्कुराहट आते-आते रह गई। बड़ी कठिनाई वह उसे रोक सका।

''मैं आपको साफ-साफ बता देना चाहती हूं, मिस्टर जयन्त ! क ये बेजा हरकतें मुझे सख्त नापसन्द हैं। मैं इन्हें नफरत की र से देखती हूं। मुझे उम्मीद है कि आइन्दा आप मेरे रास्ते पड़ने की कोशिश नहीं करगे''''''

"माफ कीजियेगा !"—विचित्र ढंग से कन्धे हिलाता शिराज वहाँ आ पहुँचा। ध्यानपूर्वक उसने शमीम और ज चेहरों की ओर देखा और उस कागज पर भी गौर कि शमीम अपने हाथ में लिए हुए थी, जिसे जयन्त ने अभी ही उसके हाथ में दिया था—वह वही कागज था, जिस लिखा था—"मोरा जियरा बेहाल।"

"यह बात हैं···" शिराज ने पेटेन्ट ढंग से अपने हिलाये "मगर यह कॉमन रूम है और यहाँ खड़े खड़े प्र बातें करना आप लोगों के हक में ठीक नहीं···माफ कीजिये —उसने जयन्त की ओर टेढ़ी निगाह और मुस्कुराते हुए से देखा।

"शुक्रिया ?"—शमीम ने कहा। जयन्त ने उसको क्रोधपूर्ण दृष्टि से देखा।

"होश की दवा कीजिये, मिस्टर जयन्त !" शमीम के में बेरुखी थी और व्यंग का आभास था।

"करूँगा, जरूर करूँगा···" जयन्त के स्वर में व्यंग और कौतुक का अपूर्व मिश्रण था—"रात काफी जा है। अच्छा हो, आप मेरी मोटर से चलें—मैं आपको पहुंचा दूँगा···" जयन्त के ऐसा कहने का तात्पर्य केवल य कि वह शमीम का घर जान जाय। इतने दिन उसे क्लब हो गये थे, मगर अभी तक वह यह नहीं जान सका आखिर वह रहती कहाँ है, किस जगह ? और शमीम भी घर के बारे में कुछ विशेष नहीं जानती थी।

"शुक्रिया !..."कहती हुई शमीम ने वह कागज का अपनी जाकेट की जेब में रख लिया—"मगर मैं आपको त नहीं देना चाहती। अब आप जा सकते हैं—'गुड बाई'

ोम इस तरह घूम पड़ी कि जयन्त को कुछ कहने का अवसर न मिला। वह सोचने लगा ऐसी बेरुखी आखिर कब तक!

●

२

"बैठिये न····!"

"आप बैठिये····"

"नहीं, पहले आप····"

"यह नहीं हो सकता सेठजी!"

लाचार सेठ केशवराव को ही पहले बैठना पड़ा। उनके ही मिर्जा जमालुद्दीन भी एक कुर्सी खींच कर बैठ गये। एक युग के बाद, तीस लम्बे-लम्बे वर्षों के बीत जाने पर ों मित्रों में भेंट हुई थी। यही कारण था कि इस तरह का ाचार व्यवहृत हो रहा था।

"मिर्जा साहब···" सेठ केशवराव बोले। सेठ केशवराव के सबसे बड़े रईस एवं सेठ थे। बड़ी-बड़ी जगहों में इनकी च थी, दूर-दूर तक उनका नाम था—मगर जरा वे क्रोधी ाव के थे। उनका व्यक्तित्व इतना प्रभावशाली था कि सारा उनके संकेत मात्र पर नाचने को प्रस्तुत रहता था। उनकी ी में शक्ति थी। यही कारण था कि जो भी बात उनके मुँह निकली वह लीक हुई। उसे बदल देना बड़े-बड़े अफसरों की के बाहर की बात थी। ऐसे थे सेठ केशवराव। "वे दिन क्या थे मिर्जा साहब।···" सेठजी विचित्र रूप से हँसे—

"जब हम दोनों जवान थे। कालेज में साथ-साथ पढ़ते थे आज बूड्ढे है, बुजुर्ग हैं...."

"वक्त की चाल बड़ी हैरत अंगेज है, सेठजी....." मिर्जा म बोले—"तीस साल का जमाना गुजर गया हमारी आ आखिरी मुलाकात हुए। इतने दिनों के बाद हम लोग आज रहें हैं। कालेज छोड़ने के बाद मैं अपनी सरविस में लग और आप कारोबार में। दोनों दोस्त दो मुख्तलिफ रास्तों दरगुजर हुए....." मिर्जा साहब जरा-सा रुके, खांसकर गला किया, फिर बोले "दो महीने हुए मेरा तबादला इस शहर हो गया है। अब तो कुछ दिनों तक साथ रहेगा :"

"मगर कितना परिवर्तन हो गया है हममें ? कितना वर्तन हो गया है हमारी चाल-ढाल और चेहरे-मुहरे में। की बात है आज भी मैं आपको पहचान न सकता, आपके चेहरे पर यह लम्बा सा चोट का निशान न होता। निशान भी क्या भूलने की चीज है, मिर्जासाहब !"

"ओह ! उन बातों की याद अब न आये, तभी अच्छा है सेठ कितना खौफनाक वक्त था वह ?"—मिर्जा जमालुद्दीन ने ठण्डी साँस ली। उनके नेत्रों के सामने बहुत दिन पहले का भयानक चित्र घूम गया—

\+ \+ \+

"मैं कहता हूं हट जाओ मेरे सामने से, नहीं तो मैं का ख्याल न कर तुम्हारा गला घोंट दूंगा....." केशव बोला उस समय वह क्रोध से पागल हो रहा था, मगर जमाल सामने खड़ा था—निश्चल ! निस्तब्ध !

"तुम मेरे दोस्त हो। कालेज में साथ-साथ पढ़ते हैं ह दोनों....." जमाल बोला—"तुम्हें बुरे फैलों की तरफ र होने से बचाना मेरा फर्ज है। मैं देख रहा हूं कि तुम

जोश में आकर एक लावारिस लड़की की अस्मत लूटना चाहते —शर्म नहीं आती तुम्हें ?""छोड़ दो उसे।"

"मुझे बचाओ""कहती हुई वह बेकस लड़की दौड़ कर ाल से लिपट गई।

"हट जाओ जमाल ! तुम हट जाओ"" केशव चिल्लाया- 'तुम मेरे गुस्से की भयंकरता को जानते हो; फिर भी सामने ड़े हो..."

"हट जाओ...!"

"केशव !""" और जमाल की चौड़ी हथेली चट्ट से केशव के गाल पर जा पड़ी—"बेवकूफ कहीं का""" उसके मुख से निकला।

"तुम...तुम..."केशव विक्षिप्त सा हो उठा, क्रोध से हाँफने लगा। दौड़कर उसने मेज पर पड़ा अपना बड़ा सा चाकू उठा लिया—"आज हमारी दोस्ती का आखिरी फैसला होगा—सम्भालो अपने को...." वह लपका जमाल की ओर, मगर जमाल ने उसकी कलाई पकड़ ली। छीना-झपटी होने लगी। इसी छीना-झपटी में वह छूरा जमाल की गलपटी में लग गया। गहरा घाव हो गया। जब जमाल एक आह के साथ भूमि पर गिर पड़ा, तब केशव को ज्ञान हुआ। अपने मित्र की हालत देखकर वह लज्जा, शोक और ग्लानि से दब-सा गया—"दोस्त, मुझे माफ करना...."—उसने केवल इतना ही कहा।

वही केशव, आज सेठ केशवराव हैं और वही जमाल, आज मिर्जा जमालुद्दीन !

\+ \+ \+

मगर यह घटना भी हमारी आपकी मित्रता में विघ्न न डाल सकी। आपने देवता की तरह मुझे क्षमा कर दिया—और

मैं ?.. मैं अपने को क्या कहूं, मिर्जा साहब ! मैं तो अपरा था, आपके चेहरे पर मैंने हमेशा के लिए एक निशान बना f है... उफ !"—बीती बातों की याद ने सेठ केशवराव अनमना सा बना दिया।

"जाने दीजिये सेठ जी ! वे जवानी के-तूफान के दिन थे !"—मिर्जा साहब ने कहा।

सेठजी ने 'कलिंग बेल' पर हाथ रक्खा, घनघनाहट साथ ही द्वार पर एक नौकर दिखाई पड़ा—"जयन्त कहाँ है ? भेज दो उसे ..." उन्होंने आज्ञा दी।

"जी पिताजी ?"—दूसरे ही क्षण जयन्त आ उपस्थित हुआ।

"तेरे चाचा आये हैं। वह जमाल चाचा, जिनकी प्राय: तुझसे बातें किया करता था...."

जयन्त ने मिर्जा साहब को झुक कर अभिवादन किया, फिर बोला—"आज आपको जमाल चाचा कहाँ मिल गये, पिताजी ?"

"आज तीस वर्ष बाद हमारी इनकी भेंट हुई है, बेटा कालेज छोड़ने के बाद से हम लोग आज मिल रहे हैं मैं 'इण्टरनेशनल इक्विपमेण्ट कम्पनी' में कुछ सामान खरीदने गया था। ये भी वहाँ उपस्थित थे। मैंने इन्हें देखा और इन्होंने मुझे। मगर ये मुझे पहचान न सके। मुझे कुछ सन्देह इनके चेहरे का निशान देखकर। मैंने इनसे पूछा और इन्होंने मन्जूर किया कि उनका नाम जमाल है तब मैंने अपना परिचय दिया..."

"जयन्त बेटा...." मिर्जा साहब बोले—"तुम्हें देखकर मुझे कितनी खुशी हुई है, यह जबान से मैं कह नहीं सकता। अपने दोस्त की निशानी देखकर, मैं अपने को भूल-सा गया हूँ। मेरी नजरों के सामने अपनी जवानी के दिन घूम रहे हैं। उस समय

सेठजी भी ठीक तुम्हारी ही तरह थे, बेटा !—बिल्कुल तुम्हारी तरह ! मुझे ऐसा लग रहा है, मानो मैं अपनी जवानी के दिनों का सपना देख रहा होऊँ और मेरा दोस्त केशव मेरे सामने खड़ा हो..."

"चाचा ! आपकी रिस्टवाच का टाइम ठीक नहीं मालूम होता—१५ मिनट 'अप' जा रही है। यह देखिये मेरी घड़ी..." जयन्त अपनी बनाने की आदत से लाचार था। मिर्जासाहब और सेठजी दोनों हँस पड़े।

"बेटा !.. वक्त मिलने पर कभी-कभी मेरे यहाँ भी आ जाया करो। कम से कम तुम्हें देखकर ही, जवानी के उन सुनहले दिनों की याद बनाये रक्खूँगा...." मिर्जासाहब ने कहा—"अगर मौका हो, तो अभी चले चलो। मैं यहाँ से सीधे घर ही जाऊँगा।"

"मगर इस समय अवकाश नहीं है, चाचा ! हो सका तो कल शाम को चला आऊँगा..."

"जरूर आना, मैं तुम्हारा इन्तजार करूँगा। यह लो मेरा कार्ड, इसी पते पर चले आना..." मिर्जासाहब ने अपना कार्ड जयन्त के हाथों में दे दिया, फिर उठ खड़े हुए—"अब तो इजाजत दीजिये, सेठ जी !" उन्होंने कहा और साहब-सलामत के बाद बिदा हुए।

"जमाल चाचा बड़े नेक आदमी हैं, पिताजी !....क्यों ? हैं न ?"—जयन्त ने कहा।

"हाँ बेटे !....पहले हम दोनों में बड़ी दोस्ती थी. दाँत-काटी रोटी थी, मगर..."

"मगर अब ..."

"अब यह दोस्ती कैसे निभ सकती है ? मेरे और उनके बीच अलंघनीय गहरी खाई है। वह मुसलमान हैं, मैं हिन्दू...हम

दोनों के धर्म भिन्न हैं, एक-दूसरे से एकदम भिन्न—ए अलग !"

"धर्म दो होने से क्या होता है, पिताजी ?"

एकाएक कोई बात याद आ जाने से सेठजी चौंक पड़े "जयन्त !" उन्होंने पुकारा !

"जी पिताजी !" जयन्त को सेठजी के इस तरह पुक से कुछ आश्चर्य हुआ !

"कोट की जेब में मेरी नोट-बुक रखी है, उसे निकाल तो एक आवश्यक कार्य करना भूल गया हूं " सेठजी मुखाकृति पर एकाएक उद्विग्नता की लहर दौड़ गई—"कमाल से मिलने के हर्ष में अपना कितना बड़ा नुकसान कर बैठा मैं—'अमा लिमिटेड' से बहुत बड़ा कण्ट्राक्ट करना था, उफ...."

जयन्त नोटबुक खोज रहा था...शायद मिल नहीं रही थी।

"क्या कर रहा है ?" उतावली के साथ सेठजी बोले—"मिल नहीं रही है क्या ? इतनी देर हो गई और तू न जाने क्या इधर-उधर खोज रहा है ?"

"नोट-बुक नहीं है पिता जी ?"

"नही है पिताजी ! निकम्मा कहीं का ? होगी क्यों नहीं ?"

—सेठजी शीघ्रता से कोट के पास जा पहुंचे। इस समय उनके चेहरे से अत्यधिक घबराहट टपक रही थी। मगर घबराहट की जगह क्रोध ने ले ली—"हुई क्या मेरी नोट-बुक उसमें कई आवश्यक पत्र, कितने ही कण्ट्राक्ट और हजारों के बैंक-ड्राफ्ट थे—मगर सब गायब ?" अधीरता से सेठजी सारा कमरा खोज डाला, मगर वह नोट-बुक न मिली।

"जयन्त !..." सेठजी की मुखाकृति क्रोध से लाल हो थी—"मेरी नोटबुक खो गई और तू इस तरह तस्वीर-सा ख

तुम मेरे मुँह पर क्या देख रहा है ?"

"आप शहर गये थे, हो सकता है कहीं छूट गई हो...."
पिता की विकलता देखकर जयन्त भी परेशान-सा हो उठा था—
"मैं टेलीफोन से सब जगह पूछ-ताछ करता हूं—"

"अमा लिमिटेड, इण्टर नेशनल इक्विपमेण्ट कम्पनी, फ्लोरा एण्ड सन्स इन्हीं तीनों आफिसों में मैं गया था, तुम तीनों जगह फोन करके पूछो। जाओ, शीघ्रता करो।"

जयन्त टेलीफोन पर चला गया। सेठजी व्यग्रतापूर्वक कमरे में टहलते रहे। दस मिनट बाद वह सेठजी के पास आया—
"कहीं पता नहीं चला, पिताजी !...." उसने कहा।

"कहीं नहीं ?...." क्रोध से सेठजी ने मेज पर हाथ पटक दिया—"हुई तो क्या हुई, गई तो कहाँ गई ? उड़ गई, गायब हो गई ? समझ में नहीं आता कुछ !...जयन्त ?"

"जी पिताजी।"

"तू जा यहाँ से—चला जा अभी..." सेठजी स्वभाव के क्रोधी थे, यही कारण था कि इस समय वे पूर्णरूप से विक्षिप्त हो उठे थे। जयन्त चला गया। सेठजी उठ कर टेलीफोन के पास आये, इण्टर नेशनल इक्विपमेण्ट कम्पनी के फोन का नम्बर मिलाया—"हलो...मैं हूँ सेठ केशवराव ! आपके आफिस में कुछ चीजें खरीदने के लिए मैं ८-३० पर गया था। मेरे बचपन के एक मित्र मिल गये...शीघ्रता में मैं अपनी नोट-बुक आपके यहाँ भूल आया....क्या कहा ? नहीं है...जरूर होगी...नहीं है..." सेठजी अपना माथा पकड़ कर बैठ गये।

"सरकार !"

"तू जा...सर नीचा किये हुए सेठजी गरज पड़े।

"मगर सरकार..."

"तू जाता है या नहीं...." क्रोध से उन्होंने सर उठाया, मगर सर उठते ही सेठजी का सारा क्रोध विलिन हो गया। उन्होंने देखा—दरवाजे पर उनके नौकर के साथ एक रमणीय मूर्ति खड़ी है।

"आप..." सेठजी अपनी अव्यस्थित विचार धारा को एकाग्र करने का प्रयत्न करते हुए बोले।

"क्या आपका नाम केशवराव है ?" पूछा उसने वीणा-विनिन्दित स्वर में।

"आइये ! क्या आज्ञा है ?...."

"आपकी कोई नोटबुक...."

'जी हाँ....खो गई है, मैं बहुत परेशान हूं उसके लिये। आप देख रही हैं न मेरा चेहरा—कितना संजीदा, कितना, परप्लेक्सड है .." सेठ केशवराव ने कहा। वह आकर कुर्सी पर बैठ गई—"क्या आपको मेरी नोट बुक का पता है ?"

"यह रही आपकी नोटबुक..." उसने एक नोटबुक पर्स से निकाल कर सेठजी के सामने रख दी। सेठजी ने अजीब उत्सुकता से नोटबुक उठा ली। काँपते हुए हाथों से देखा, सब पत्रादि यथावत् थे। सेठजी के चेहरे की सारी परेशानी दूर हो गई। मन्द मुस्कान के साथ नम्र स्वर में उन्होंने कहा—"आपको किन शब्दों में धन्यवाद दूँ। आपने मुझे बहुत बड़े नुकसान से बचा लिया। आज ही मैंने 'अमा लिमिटेड' के साथ एक बहुत बड़ा कण्ट्राक्ट किया था, उसके सब पत्रादि इसी नोटबुक में थे...." सेठजी ने नोटबुक मेज की दराज में रखते हुए पूछा—"आपका नाम ?...."

"शमीम !" वह बोली।

"शमीम !" स्थिर वाणी में सेठजी ने दुहराया—"आपको यह नोटबुक कहाँ मिली !"

"आज नौ बजे मैं इण्टर नेशनल इक्विपमेण्ट कम्पनी' में

शापिङ्ग करने गई तो परचेजर्स डेक्स पर नोटबुक को पड़ी देखा। उसमें कई कीमती कागज नजर आये। मैंने सोचा, अगर यह यूँही पड़ी रहेगी तो किसी दूसरे के हाथ पड़ जायगी और इसके मालिक का बहुत बड़ा नुकसान हो जायगा, इसीलिये..."

"जी हाँ ! ठीक ८ बजे मैं भी वहाँ गया था। वहाँ मेरे एक बहुत गहरे दोस्त मिल गये। उतावली में मैं अपनी नोटबुक वहीं भूल आया...." सेठजी हँसने लगे।

'अब मुझे इजाजत दीजिये।"

"यह भी कोई बात है...कुछ देर तो ठहरिये ही। आपने मेरा इतना बड़ा काम किया है, थोड़ी सी खातिरदारी का भी मौका मुझे नहीं देना चाहती ? दस मिनट रुकिये—केवल दस मिनट ! तब तक मैं अपने आफिस से कुछ जरूरी काम करके लौट आता हूँ। तकलीफ के लिए क्षमा कीजिएगा...." सेठजी लपकते हुए चले गये। शमीम कुर्सी पर बैठे-बैठे कमरे का निरीक्षण करने लगी।

जयन्त कपड़े पहन कर कहीं जाने की तैयारी में था कि सेठजी आ पहुँचे— "नोटबुक मिल गई जयन्त !" उन्होंने उत्साहपूर्ण स्वर में कहा।

"कहाँ मिली, पिताजी ?"

"तू मेरे कमरे में जा; सब पता चल जायगा ? मैं भी थोड़ी देर में वहीं आता हूँ—"

जयन्त सेठजी के कमरे में आया। उसने देखा पूर्व परिचित मूर्ति वहां उपस्थित है। उसके मुँह से सहसा निकल गया—

"तुम....आप !" शमीम का चेहरा एकाएक तमतमा गया परन्तु जयन्त मुस्कराता हुआ उसके सामने खड़ा रहा।

"आखिर आपका इरादा क्या है ?"

"जो समझिये...." वह हँस पड़ा।

"आप मुझे क्यों परेशान कर रहे हैं ?...कैसे यहाँ आ पहुँचे आप ? इस तरह मेरे पीछे घूमने में आपको क्या मिलता है?.... मेरे पीछे पीछे तो आप इस मकान में आये हैं ? आखिर क्यों ? एक बेजानी पहचानी जगह में आने की हिम्मत आपने कैसे की ?"

उठ कर खड़ी हो गई वह ।

"मैं पूछती हूँ कि आप मेरे पीछे क्यों पड़े हैं ?"

शमीम को जरा भी मालूम न था कि इस समय जिस मकान में वह उपस्थित है, वह स्वयं जयन्त का मकान है ।

"आप भूलती हैं, मिस शमीम ? मैं आपके पीछे नहीं पड़ा हूं, बल्कि आप ही मेरे पीछे —"

"यह कैसी बेहूदी बात कर रहे हैं, आप ?" पैर पटककर वह बोली—"चले जाइये । अभी इसी वक्त । वर्ना मुझे सेठजी को इत्तिला करनी पड़ेगी...." शमीम की इस तुनुकमिजाजी पर जयन्त को हँसी आ गई ।

"क्या है ? बात क्या है जयन्त ?" दरवाजे पर सेठजी खड़े थे ।

"बात यह है पिताजी...." जयन्त ने अपना 'मूड' ठीक किया—"कि शमीम से मेरी पहले की जान-पहचान है ।"

'मुझे माफ कीजियेगा, मिस्टर जयन्त !"—शमीम ने मुस्कुराते हुए चेहरे से नम्र स्वर में कहा—"मैं नहीं जानती थी कि यह आप ही का मकान है और सेठजी आपके वालिद हैं—" मुस्कुराहट से उसके चेहरे की खूबसूरती जयन्त को लाजबाव बेमिसाल लगी ।

कुछ मामूली बातचीत के बाद नाश्ता-पानी हुआ और तब इजाजत लेकर वह उठ खड़ी हुई । जयन्त उसे दरवाजे तक पहुँचाने आया । जाते-जाते उसने कहा—"मुझे उम्मीद है कि आप मुझे परेशान करने की तकलीफ नहीं करेंगे, मिस्टर जयन्त ।"

और जयन्त ने कलेजे पर हाथ रखकर, दिल को पत्थर-सा बना कर सब सुन लिया।

३

"यह कौन है, जो ऐसी बात कह रहा है?" जयन्त क्रुद्ध मुद्रा में बड़बड़ाया। साथ ही धीरे-धीरे सरकती हुई मोटर की खिड़की से सर निकाल कर पीछे की ओर देखा उसने। उस दिन खूब पानी बरसा था। सड़क कीचड़मय हो उठी थी। जयन्त जमाल चाचा से मिलने के लिए उनके घर पर जा रहा था। रास्ते में शायद किसी राही के ऊपर उसकी मोटर के पहियों द्वारा उछला हुआ कीचड़ पड़ गया था और उस राही के मुँह से फूल बरस पड़े थे। "अन्धे बन कर चलते हैं ये मोटर वाले?— और यही बात जयन्त को बुरी लगी थी।

"जाने दीजिये सरकार, कोई मैडम साहिबा हैं...." सोफर बोला—"कीचड़ पड़ गया है उनकी साड़ी पर, इसलिए...."

"मगर उसने ऐसा कहा क्यों? तुम रोको मोटर।"

मोटर रुकी झटके साथ जयन्त उतर पड़ा। देखा—एक मैडम साहिबा की साड़ी पर कीचड़ के कुछ छींटे पड़ गये हैं और वे इसके लिए मोटर के मालिक को 'अन्धे' की उपाधि दे बैठी हैं।

शमीम!....हाँ शमीम ही तो थी वह!...देखते ही जयन्त का सारा क्रोध विलीन हो गया। शमीम उसके पास तक चली आई—"आप..." उसके मुँह से आश्चर्य की आवाज निकल पड़ी ..."तो आप हीं को यह मेहरबानी है..." उसने अपनी साड़ी पर पड़े हुए कीचड़ की ओर संकेत किया—"मालूम होता है आप अपनी सारी शराफत भूल बैठे हैं मि० जयन्त।"

"माफ कीजिये!" जयन्त म्लान हँसी हँस पड़ा—"मगर कुसुर मेरा नहीं आपका है..."

"मेरा !..."

"जी हाँ, आपका ! मिस शमीम का !....मुझे वक्त नहीं गुड बाई !" जयन्त घूम पड़ा और मोटर पर पैर रखा उ

"मगर सुनिये तो...."

"मुझे तिलमात्र भी समय नहीं....एक आदमी से f बहुत जरूरी है—फिर कभी..."

"मगर....मेरी साड़ी खराब हो गयी है। अगर आप वानी करके मुझे अपनी मोटर पर...."

"माफ कीजिए....आप मजाक कर रहीं है मेरे साथ....

"मैं मजाक कर रही हूँ?" शमीम का चेहरा लाल हो गय

"जी हाँ !" जयन्त अपनी मोटर पर बैठ गया। शोफर मोटर स्टार्ट की—'आप मजाक कर रही हैं मेरे दिल के साथ.. दूसरे ही क्षण मोटर तेजी के साथ दौड़ चली। एक क्षण के f शमीम के चेहरे पर भोली मुस्कुराहट दौड़ गई, मगर तुरन्त क्रोध की लाली ने उस पर अपना अधिकार कर लिया।

झटके के साथ जयन्त की मोटर मिर्जा जमालुद्दीन के दर पर आ रुकी। मिर्जा साहब मानो उसकी प्रतीक्षा कर रहे झट बाहर निकल आये—"आओ बेटा..." उन्होंने कहा।

"चाचा !" दौड़कर जयन्त उनसे लिपट गया। मिर्जा उसके साथ अपने कमरे में आये। दोनों दो कुर्सियों पर आ हुए।

"मुझे उम्मीद नहीं थी, बेटा !..." जमाल चाचा बोले "कि तुम आओगे। मैंने सोचा वारिस की वजह से शायद न आ सको या सेठजी तुम्हें आने की इजाजत न दें..."

"ऐसा नहीं हो सकता, चाचा ! भला पिताजी आपके आने से कभी रोक सकते हैं ?"

"बेटा !"—जमाल चाचा ने गहरी सांस ली—"सेठजी अजीब मिजाज के आदमी हैं। इतने सालों तक मैं उनका दोस्त था, फिर भी मैं उनके मिजाज की गहराई तक न पहुँच सका— कभी उनके चेहरे पर हँसी है तो कभी नफरत, कभी खुशमिजाजी है तो कभी गमगीनी—क्या-क्या नक्श उनके चेहरे पर नहीं आते थे ?····और इसलिए उनका गहरा दोस्त होते हुए भी मैं उनके मिजाज का 'एस्टिमेट' नहीं कर सका था····उनकी अजीब आदतें थीं और सच कहता हूं, बेटे ! अगर मेरी जगह दूसरा कोई होता तो उससे उनकी जरा के लिए भी न पटती। मगर मैंने उनसे हर प्रकार से अपनी दोस्ती —नहीं तो उनके साथ दोस्ती निभानी हँसी-खेल नहीं। तुम्हें कर ताज्जुब होगा कि उस वक्त मुझे छोड़कर उनका कोई दोस्त था—सभी दुश्मन थे, खून के प्यासे दुश्मन !····मैं उन्हें इतना ता था, मगर वे, 'वे' ही थे, कभी मुझसे दिल खोलकर बातें करते थे। उन्हें मेरे मजहब से नफरत थी—सख्त नफरत ! का कहना था कि मैं मुसलमान हूं और हर मुसलमान का बच्चा न्दुओं का दुश्मन है....मगर मैं उनकी बात की परवाह नहीं करता। वे मुझे बिगड़ते थे, मेरे मजहब पर कीचड़ उछालते थे और मैं उनकी बहक सुनता रहता था। वे बचपन के गुस्सेवर बेटे !"

"ठीक कहते हैं, आप····"

"जहाँ तक मैं समझता हूं, मेरे मजहब की तरफ से उनकी अब भी न गई होगी ? आदत छुटती नहीं, बेटा जयन्त !···· इसलिए मैंने सोचा था कि शायद वे तुम्हें मुझ मुसलमान के न आने दें। तुमने देखा नहीं, जिस वक्त मैं तुमसे अपने मकान आने को कह रहा था वे बड़ी कड़ी निगाह से मेरी ओर देख थे। उनकी निगाहें साफ कह रही थीं—तुम मुसलमान हो।

एक हिन्दू का तुम्हारे यहाँ क्या काम ?''—मुझे ताज्जुब हुआ सेठजी के पहले के दिली जजबात अब भी नहीं बदले हैं और उ मिजाज पहले से भी ज्यादा हैरत-अंगेज हो गया है....'' कहते-मिर्जासाहब चौंके—''उफ ! बातचीत के सिलसिले में मैं एकदम खो गया। जरा बैठे रहो बेटा ! मैं चाय लेकर अभी आता हूं''' और जयन्त के कुछ कहने के पहले ही वे उठकर भीतर चले गये।

''तुम....! आप !....'' दरवाजे पर से आवाज आई। ने चौंक कर उधर देखा तो दरवाजे पर शमीम को खड़ी पाया उसका चेहरा ताज्जुब और हैरानी से लाल हो गया था।

''ओह ! आप भी आ गईं ?'....जयन्त कहने लगा—' मैं पूछ सकता हूँ कि इस तरह मेरे पीछे पड़ने की वजह है ?....''

''उफ ! मैं देख रही हूं कि आप मुझे पागल बना देंगे....' शमीम ने अपना माथा पकड़ लिया—''आपको मैं इतना हुआ नहीं समझी थी, मिस्टर जयन्त ! ऐसे ही लोगों के 'आवारा' लफ्ज का ईजाद हुआ है, मगर आप तो शरीफ लड़के हैं....''

''आपको इस ईजाद के लिए शुक्रिया !''

''आप मुझे परेशान करने यहाँ भी आ पहुँचे। मैं देख रही कि मुझे सख्ती से काम लेना पड़ेगा....'' एकाएक शमीम का कठोर हो गया—''मैं पूछती हूँ, मिस्टर जयन्त ! कि आपको तरह मेरे मकान पर आने की क्या जरूरत थी ?''

''आपका मकान ?....क्या यह आपका मकान है ?....'' को सचमुच अब आश्चर्य हुआ।

''बड़े भोले बनते हैं, जानते नहीं थे कि यह ... !''

गुस्से से हाँफने लगी थी—"अब आप तशरीफ ले जाइये, नहीं तो मैं अब्बा को पुकारती हूँ···" मगर जयन्त बैठा ही रहा—"आप नहीं जाते —नहीं जायेंगे····अब्बा !" शमीम इस तरह चिल्ला उठी, मानो अकस्मात कोई आफत उसपर घहरा पड़ी हो।

दूसरे ही क्षण मिर्जासाहब हाँफते हुए दौड़े आये—"क्या है बेटी शमीम ?····है क्या ?" मगर शमीम को कोई उत्तर सूझ न पड़ा।

"बात यह है, चाचाजी ! कि मिस शमीम से मेरी पुरानी जान पहचान है और····" जयन्त ने स्थिति सम्हाल ली।

"मगर पुरानी जान-पहचान में इस तरह चिल्लाने की क्या जरूरत थी ?" मिर्जासाहब के इस कथन से शमीम को हँसी आ गई, साथ ही लज्जा का अनुभव हुआ कि वह बिना कारण क्यों इस प्रकार चिल्ला पड़ी थी—साथ ही ताज्जुब हुआ उसे, यह जानकर कि उसके अब्बा जयन्तकुमार से परिचित हैं।

"बेटी शमीम ! यह है जयन्तकुमार, मेरे पुराने दोस्त का बेटा। तुमने सेठ केशवराव का नाम सुना होगा···"

"सुना ही नहीं, मैं उनके यहाँ कल गई भी थी···"

"कल गई थी तुम ?....सेठ केशव के यहाँ ? ताज्जुब है ! कल तो मैं भी उनके यहाँ गया था। इण्टर नेशनल इक्विपमेण्ट कम्पनी में मेरी भेंट हुई थी उनसे····"

"ओह !".... शमीम ने दीर्घ श्वांस ली—"सेठजी ने अपने एक गहरे दोस्त का जिक्र मुझसे किया था, मगर मैं नहीं जानती थी कि वह आप ही होंगे····"

"मुझे माफ कीजियेगा, मिस्टर जयन्त ! मुझे अफसोस है—" शमीम ने जयन्त की ओर घूमकर कहा। और जयन्त ने केवल 'शुक्रिया' अदा कर दिया।

"बेटी शमीम ! तू इन्हें अपने ड्राइङ्गरूम में ले जा, तब तक एक जरूरी काम से फुर्सत पा लेता हूं...." मिर्जासाहब उठते बोले। शमीम की रतनारी आँखें जयन्त की आँखों से जा मानो उससे कह रही हों —'चलिये'—और इस मधुर अवाहन वशीभूत होकर वह शमीम के पीछे चल पड़ा।

शमीम का ड्राइङ्गरूम सुन्दर और सुसज्जित था।

जयन्त ध्यानपूर्वक देखने लगा। एक पुस्तक मेज पर से ली उसने। खोलकर देखा। एक मार्के का शेर था, उसे आउट कर उसने पुस्तक शमीम के हाथों में दे दी। शमीम पढ़ा—

तुम नाज करो शौक से हम कुछ नहीं कहते।

इस नाज पर कोई मर जाय तो क्या हो ?

"इसका मतलब ?...." एकाएक शमीम की मुखाकृति हो गई। जयन्त झेंप गया—"मतलब !....देखिए न, क्या शेर है ?"

"अच्छा है 'सिर्फ आपके लिए...." शमीम ने मुंह कर कहा।

इसी तरह कितनी ही बातें हुई। चाय पी गई, क्लब की हुई, सब कुछ हुआ—मगर शमीम के हृदय की थाह जयन्त न सका। वह जब हंसती तो उसे अनुभव होता जैसे वह सब कुछ गया है। मगर पलक मारते भर में उसका मूड बदल जाता। अनमनी-सी हो उठती। आँखों में क्रोध की लालिमा छा जाती जयन्त सिहर उठता। सोचता—विचित्र है यह सौन्दर्य प्रतिमा।

मगर जयन्त को औरतों के दिल की परख न थी, नहीं वह जान जाता कि शमीम की इस बेरुखी के पीछे कौन सा

छिपा है। चलते समय शमीम ने उससे केवल इतना कहा था—

"मुझसे मुलाकात करने की मेहरबानी न कीजिएगा" मगर अभागा जयन्त नहीं जानता था कि औरतों का 'अस्वीकार' ही 'स्वीकृति' का द्योतक होता है।

●



"हलो जयन्त !"

"हलो डियर !...." दौड़कर जयन्त सारंग से लिपट गया—"कहाँ थे इतने दिनों तक, दोस्त ? गये तो खबर तक न ली मेरी, बैठो"—उसने उसके आगे एक कुर्सी सरका दी।

"तुम्हारे पिताजी कहाँ हैं ?" पूछा सारंग ने।

"गये होंगे कहीं किसी काम से ···· " जयन्त के मुख पर लापरवाही का भाव था।

"बहुत खोये-खोये से दीखते हो, जयन्त ! बात क्या है ?···" सारंग बोला—"सदैव मन्द मुस्कान से परिपूर्ण रहने वाला तुम्हारा मुख-मण्डल मलीन और श्रमित क्यों है ?"

"कुछ न पूछो। तुम्हें गये दो महीने ही तो हुए हैं, परन्तु इन दो महीनों के अन्दर मैं पूरा बदल गया हूं—" जयन्त ने थोड़ा सा मुस्करा कर कहा।

"यह परिवर्तन तो मैं देख रहा हूं, मगर इसका कारण क्या है ? किसी के साथ हृदय का आदान-प्रदान करने का 'एक्सपेरिमेण्ट' तो नहीं कर रहे हो····"

"यही बात है।" जयन्त ने दीर्घ श्वांस छोड़ी।

"इस तरह श्वांस छोड़ने का अभिप्राय क्या है ? क्या तनातनी है ?" सारंग ने मुस्कराते हुए प्रश्नसूचक दृष्टि जयन्त डाली।

"कुछ न पूछो—ऐसी निर्दयी है वह कि…पर सत्य कहता मेरी अवस्था अच्छी नहीं। हृदय पर पत्थर रख लिया है मैंने, सोचकर कि घायल की गति घायल जाने—"

टेलीफोन की घण्टी बजी। जयन्त ने आगे बढ़कर रिसीवर लिया— हलो'

"……"

"हलो, मिस्टर जयन्त है ?"

"जी हां मैं जयन्त बोल रहा हूँ…आप ?…"

"मैं शमीम हूँ ! क्या कर रहे हैं आप इस वक्त ?"

"कुछ नहीं, यूँही बैठा हूँ, मगर मेरे कान धोखा तो नहीं दे हैं, मिस शमीम ?"

"आपका मतलब ?"

"क्या सचमुच आप हो फोन पर बोल रही हैं ?…"

"आपको ताज्जुब क्यों हो रहा है, मिस्टर जयन्त ?"

"इसलिए कि आप एकाएक इतनी रहमदिल कैसे हो गईं ?"

"बस हो गई हूँ-एक्सप्लेनेशन (सफाई) की जरूरत नहीं आज आप क्लब आ रहे हैं या नहीं ?"

"आऊँगा। मुझे उम्मीद है आप भी…"

"जरूर ! जरूर !"

रिसीवर रख दिया गया। जयन्त आकर फिर कुर्सी पर गया—"कैसी अजीब मिजाज है ?" वह स्वतः से बोला।

"क्या है…कौन था ?" पूछा सारंग ने।

"वही थी…"

"क्या कह रही थी ?"

"कुछ नहीं, भविष्य उज्ज्वल होना दीखाई पड़ रहा है क्लब में बुलाया है ...."

आज ज्योंही जयन्त मोटर पर से उतरकर क्लब की सीढ़ियों के पास पहुँचा तो उसने देखा—क्लब के बरामदे में कुछ किताबें जमीन पर बिखरी पड़ी हैं और शमीम उन्हें उठाने में संलग्न है। जयन्त को महान आश्चर्य हुआ। शीघ्रतापूर्वक बढ़कर वह शमीम के पास जा पहुँचा—"बात क्या है ?" उसने पूछा। मगर शमीम की मुखाकृति पर दृष्टिपात करते ही वह और भी आश्चर्यचकित हो गया। उस समय शमीम का मुखमण्डल क्रोध से रक्ताक्त हो रहा था।

"मैं आजिज आ गई हूं इस शिराज से..." उसने कहा—"देखिये न ! ऐसा जोर से धक्का दिया कि सारी किताबें जमीन पर बिखर गयीं। जरा भी एटीकेट (सभ्यता) नहीं है उसमें। इतना बेहूदापन, इतना बेहयापन !...."

"मगर उसने ऐसा किया क्यों ?"

"वह अपने को लगाता है। समझता है वह शेर है, और हम गीदड़ हैं, चूहे हैं...." शमीम दो सेकेण्ड रुककर फिर बोली—"उसने जान-बूझकर मुझे धक्का दिया था...."

"मैं देखता हूं उसे..." जयन्त को क्रोध आ गया था, शिराज का अनुचित व्यवहार सुनकर—"वह अपने को समझता क्या है ?" जयन्त कॉमन रूम की ओर बढ़ा।

शमीम ने उसे रोकने का प्रयत्न किया।

"आप फिक्र न करें—वह मेरा कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता। जयन्त वास्तव में क्रोधित हो उठा था। शिराज का शमीम को धक्का देने की बात सुनकर, न जाने क्यों उसके हृदय में ज्वाला-

सा उत्पन्न ... , रक्त ऊष्ण उठा था।

कॉमन रूम में बैठा हुआ शिराज अपने एक मित्र के वार्तालाप में तल्लीन था। जयन्त को आता देखकर वह चैतन्य गया, परन्तु वार्तालाप में व्यवधान नहीं पड़ने दिया। जयन्त क्रुद्ध मुद्रा, रक्तात्क नेत्र एवं हिंसक भाव-भंगिमा देखकर वह गया कि परिणाम उसके विपरीत है, परन्तु वह घबराया नहीं। शान्ति के साथ वह कुर्सी पर से उठ खड़ा हुआ—"आ गये अजीज दोस्त !" उसने पूर्व परिचित ढंग से अपने कन्धे हिलाये-' आ गये ? मैं जानता था कि तुम जरूर आओगे। मिस शमीम धक्का दिये जाने की बात सुनकर, तुम अपने को सम्हाल न और मुझसे मुलाकात करने के लिए बेहाल, बेताब हो जाओगे - मैं जानता था, फिर भी...."

"मिस्टर शिराज ?...." जयन्त का कर्कश स्वर गूंज उठा सुसज्जित कामन रूम में।

"बेग योर पार्डन !...." थोड़ा मुँह विचका, फिर अपने ढंग से कन्धे हिलाकर वह बोला—"मगर तुमने बेकार तकलीफ मेरे दोस्त ! मैंने मिस शमीम से माफी माँग ली थी, यह कहकर धक्का मुझसे इत्तफाकन लग गया, जानबूझ कर धक्का देने की नीयत न थी..."

"गलत !....बिल्कुल गलत ! तुमने जान-बूझकर धक्का दिया जानते हो इसका अंजाम ?"

"तुमसे दुश्मनी—यही हो सकता है इसका अंजाम ?"

और शिराज हँस पड़ा। जयन्त की क्रोधाग्नि में आहुति पड़ शिराज की बात सुनकर वह काँपने लगा। उसे लगा, मानो की प्रत्येक बात में व्यंग का सम्मिश्रण हो।

"मगर मैं पूछता हूं कि तुम इतने अन्धे बनकर क्यों चलते ?"

"मिस्टर जयन्त!..." और अब शिराज की भी मुखाकृति हो उठी—"तुम हद के बाहर जा रहे हो। ऐसा न हो कि अपनी ताकत अजमाने का मौका मिले..."

"मैं तैयार होकर आया हूँ...."

"ऐसा न हो कि मेरे हाथ तुम्हारे गले से मिलने के लिए बेताब जायें..."

"शिराज...!"

"ऐसा न हो कि मेरे घूंसे तुम्हारी पीठ चूमने के लिए उतावले उठें..."

"ऐसा न हो कि...."

"...." और दूसरे ही क्षण जयन्त की हथेली शिराज के गाल तड़ाक से जा पड़ी। शिराज गिरते-गिरते बचा।

"मिस्टर जयन्त!..." शिराज की भंगिमा एकाएक बदल ी।

वह हँस पड़ा एक भयानक हँसी—"तुममें तमाचे मारने की मत है तो मुझमें माफ कर देने की ताकत है दोस्त मैं तुम्हें इस जा हरकत के लिए माफ करता हूँ..." उसने गर्व के साथ जयन्त ओर देखा—"फिर शमीम की ओर मुड़कर बोला—"मिस शमीम! आप मेरे इस नादान दोस्त को राह पर लाने की कोशिश कीजियेगा र उसे यह बता दीजियेगा कि अगर वह फिर कभी ऐसी हरकत गा तो उसका सर सलामत नहीं रहेगा—हाँ!" और वह शीघ्रता कामन रूम के बाहर निकल गया।

जयन्त धम्म से एक कुर्सी पर बैठ गया। उसे बड़ी ग्लानि हो था अपने इस क्षणिक आवेश पर। आखिर उसने शिराज

को क्यों मारा ? शमीम उसकी होती ही कौन है, जो वह थोड़ी सी बात भी सहन न कर सका।

वह विक्षिप्त-सा बहुत देर तक बैठा ही रहता, यदि पीछे से आकर उसके कन्धे पर हाथ न रख दिया होता।

कितना सुखद था वह स्पर्श—और कितना मादक !

× × ×

५

"देखकर जाइयेगा चाचाजी ! खेल बहुत अच्छा है। ऐसे बार-बार नहीं आते। राबर्ट टेलर और विवेन ली का पार्ट है" जयन्त ने कहा।

"मुझे जरा भी वक्त नहीं है, बेटा ! क्या कहूं, मैं तो नादान लड़की से लाचार था···" जमाल चाचा ने हंसते हुए में खड़ी शमीम की ओर देखा—"इसने ऐसी जिद की कि सिनेमा हाउस तक आना पड़ा। यह तो कहो कि इत्तफाक से मिल गये, वर्ना मेरा बहुत बड़ा नुकसान हो जाता। अब तुम जाकर देखो—मैं चला !"

"तुम्हें भी देखना पड़ेगा, अब्बा !"

"कैसी हठीली लड़की है ? जयन्त तो तेरे साथ है ही ?" जमाल ने खीझकर कहा, फिर जयन्त की ओर घूमकर "जयन्त ! इसे अपनी मोटर से घर तक पहुँचा देना····" जमाल चाचा चले गये।

"मैंने पहले ही बॉक्स रिजर्व करा लिया है, चलिये चलें—" शमीम बोली।

"अभी खेल शुरू होने में काफी देर है—अच्छा हो, हम

ही खड़े होकर किसी 'टापिक' पर विचार करें....'' जयन्त ने हा।

मगर उन दोनों को बातचीत करने के लिए कोई टापिक ही हीं मिला। और दोनों बहुत देर तक चुपचाप, एक दूसरे के आमने ामने खड़े रहे। कभी-कभी दोनों की चंचल आँखें आपस में जा ती थीं और एक की आँखें, दूसरे की आँखों में न जाने क्या ूढ़ने की कोशिश करने लगती थीं।

''यह बात है....'' शिराज अपने एक दोस्त के साथ नुमायशी से कन्धे हिलाता हुआ पास ही से जा रहा था। शमीम और यन्त को शायद उसने देख लिया था और इसीलिए उसने यह बात न्त को सुनाने के लिए जोर से कही थी। कहकर अपने दोस्त का ाथ पकड़कर शमीम की ओर संकेत किया।

''भाई खूब!'' उसके दोस्त ने केवल इतना कहा और दोनों बढ़ गये।

''शिराज था—देखा आप ने?''—शमीम ने कहा।

''इसे देख कर न जाने क्यों मेरा खून खौलने लगता है। बड़ा भयानक आदमी है।'' जयन्त ने कहा।

घण्टी बजी दोनों जाकर बाक्स में बैठ गये। मुलायम कोच पर एक दूसरे से एकदम समीप सटकर बैठे हुये वे दोनों प्राणी, त संकुचित हो रहे थे। शमीम की आँखें खुली रहने पर भी, लग रहा था जैसे कुछ सोच रही हो और जयन्त बात करने का सीधा मार्ग ढूँढ़ने में अपनी सारी बुद्धि खर्च कर रहा हो।

''मिस शमीम!....'' उसने पुकारा। शमीम ने उसकी ओर —''मैं आप से एक बात पूछने की इजाजत चाहता हूं।''

''पूछिये न!''—वह भोलेपन से मुस्कुरा पड़ी।

''मगर....'' कहते-कहते जयन्त दुविधा में पड़ गया।

"कहिये, कहिये !" बड़े अन्दाज से उसने जयन्त की दुविधा को दूर किया और जयन्त को उसका यह भाव-परिवर्तन देखकर महान आश्चर्य हुआ। वह सोचने लगा—यही है शमीम जिसकी क्रूर भाव-भंगिमा देखकर वह उसे 'थण्डर बोल्ट' समझता था, मगर आज उसके सुन्दर मुख-मण्डल पर क्या ही स्वर्णिम ज्योति छिटक रही है, मानो साक्षात् धवलचन्द्र व्योममार्ग भूल कर इस भूखण्ड पर देदीप्यमान हो उठा हो।

"मैं पूछना चाहता हूँ, मिस शमीम !" जयन्त के चेहरे पर अब भी संकोच का भाव था, उद्वेग भी कम न था, फिर भी वह साहस कर बोला—"कि आप मुझसे नाराज क्यों रहा करती हैं। मेरे कहने का मतलब यह कि····"

"चुप भी रहिए !" शमीम को हँसी आ गई। उसके मोती जैसे दाँत बिजली के प्रकाश में चमक उठे—"मैं नाराज क्यों होऊँगी ? मुझमें नाराजगी के कौन-से निशानात आप ने देखे ? ओह ! आप शायद पिछले दिनों की बात कह रहे हैं····" शमीम रुकी, एक बार उसने चारों ओर ध्यानपूर्वक देखा, फिर संयत स्वर में बोली—"मुझे अफसोस है मिस्टर जयन्त, कि पिछले कुछ दिनों तक मैं आपके साथ अच्छी तरह पेश नहीं आई थी। मगर उसमें मेरा कुसूर नहीं, सिर्फ दिल की झिझक थी। मैं उसके लिए माफी चाहती हूं···"

"मा····फी।" आश्चर्यान्वित जयन्त के मुख से यह दो अक्षर का शब्द दो भागों में बटकर निकल पड़ा—"आप माफी चाहती हैं ?" इस अद्भुत युवती का विचित्र परिवर्तन देखकर उसके दिल में तूफान-सा उठ खड़ा हुआ। वह सोच उठा कि स्त्री का चरित्र कितना दुर्भेद्य है ?

"जी हाँ, मैं माफी चाहती हूं। खासकर कल मेरे ही सबब स
िराज का आपके साथ 'अप एण्ड डाउन' होने का मौका मिला।
शमिन्दा हूं।"

जयन्त ने ठण्डी सांस ली ! कैसी मधुर बातचीत हो रही थी, ैता मादकतापूर्ण वातावरण उपस्थित हो गया था—सोचते उसके हृदय में एक टीस पैदा करने वाली आशा का संचार आ। आशा का दामन पकड़कर, संकुचित स्वर में उसने कहा— 'मैं माफी देने लायक नहीं हूं, मिस शमीम !—हाँ, मुझे प्रसन्नता ो, अगर हमारी दोस्ती...." फक्क से बत्तियाँ बुझ गयीं। हाल में घोर अन्धकार छा गया। जयन्त का हृदय जोरों काँप उठा। उसके मुख से 'दोस्ती' शब्द निकलते ही प्रकाश का ब हो जाना, उसे प्रलय जैसा भयानक प्रतीत हुआ। उसे गा, जैसे यह अन्धकार उसके उज्ज्वलमय भविष्य में, उसके ल्हादमय जीवन में आने वाली विपत्तियों की ओर पूर्व संकेत कर हा है।

खेल आरम्भ हुआ। चमचमाते हुए रजतपट पर अनेकानेक के दृश्य अंकित होने लगे। उस दिन मेट्रो गोल्डविन मेयर 'वाटरलू ब्रिज' चल रहा था। प्रेम से लबालब भरा चित्र था। ऐसे वोत्पादक उसके दृश्य थे, ऐसी व्यथापूर्ण उसकी कहानी थी, मनोरम उसका दिग्दर्शन था कि दर्शकगण 'वाह वाह' कर थे। प्रेमियों के लिए तो वह चित्र जैसे वरदान था। जयन्त -खोया-सा सब कुछ देख रहा था। शमीम भूली-सी परदे पर लगाये थी।

क्या हुआ, यदि वह एक जड़ चित्र था—मगर था तो जीवन घटनाओं का वास्तविक चित्रण ! परदे पर आवाज आ रही —"मैं वैभवशाली हूं और तुम....मैं मानता हूं कि तुम दुनिया

की दृष्टि में हेय हो, घृणित हो, मेरे अयोग्य हो, मगर हृदय तो प्रेम देखता है।

प्रेम ! कितना निर्मल, कितना मादक, कितना आल्हादपूर्ण यह प्रेम ! तुम मेरे प्रति किसी प्रकार की दुर्भावना को दो, डार्लिंग माइरा ! हम तुम जो हैं वही रहेंगे। सितारे जिस आकाश-मार्ग पर प्रदीप्त होकर सारी दुनिया पर हंसते उसी प्रकार हम लोग भी अपने हंसने वालों पर हंसेंगे। हम वह तारे हैं जो कभी विलुप्त नहीं होते—अचल हैं, अटल हम लोग"

"मैं प्रलय तक तुम्हारा साथ दूंगी, डियर...." वह कह थी -- दुनियावालों की क्या हस्ती, जो हमारा-तुम्हारा विच्छेद सकें। हम तुम दोनों अनन्तकाल तक प्रेमपाश मे आबद्ध र स्वर्गीय आनन्द का उपभोग करेंगे...." और वह उसके शरीर से की तरह चिपक गई।

देखते-देखते जयन्त की नसों में विद्युत-प्रवाह दौड़ गया। से काँपता हुआ उसका हाथ शमीम के कन्धे पर जा पड़ा। कुछ न बोली। वह एकटक परदे पर के उन दो अपूर्व प्रेमियों सम्मिलन देख रही थी। कितने सुखी थे वे दोनों !

"शमीम !" उसने भर्राये स्वर में पुकारा।

शमीम कुछ न बोली। उसके नेत्र परदे पर स्थिर रहे।

"शमीम !... क्या नाराज हो गईं ?"

शमीम चुप रही !

"तुम्हें तरस नहीं आती ?"

शमीम अब भी चुप रही। जयन्त खिसककर उसके ए पास आ रहा। इस समय उसके शरीर में तेजी के साथ प्रवाहित हो रहा था। एक प्रकार की अल्हड़ता, एक प्रकार का

याद उसके अन्तस्थल में छा गया था। वह एक मधुर स्वप्न देख था—यौवन से परिपूर्ण एक मुखाकृति उसके मुख के पास आकर गई है। आवेश में आकर उसने उस भोले-भाले मुखड़े को दोनों हथेलियों के बीच जकड़ लिया है और उस सौन्दर्यमयी तिमा के अधरों का मधु, उसके ऊष्ण अधरों ने हठात् हरण कर या है, और....

और उसे ज्ञान हुआ तब, जब सिनेमा हाल प्रखर प्रकाश से गा उठा और दर्शकगण शीघ्रतापूर्वक बाहर निकलने लगे। वे नों भी बाहर आये। रात्रि अधिक व्यतीत हो चुकी थी। पास के स्टोरेण्ट की घड़ी ने दस बजा दिये थे। दोनों रेस्ट्रा के एक प्राइवेट म में आकर बैठ गये। 'ब्वाय' को दो कप चाय और दो आमलेट की आज्ञा दे दी।

लगभग ग्यारह बजे दोनों रेस्ट्रां से बाहर निकले। जयन्त मोटर खड़ी थी। वह जाकर 'ह्वील' पर बैठ गया। भी उसके पास आ बैठी। मोटर द्रुत गति से भाग , नीरव रजनी का वक्षस्थल भेदती हुई! सड़क सुनसान थी! में किसी मनुष्य की छाया दृष्टिगोचर नहीं हो रही थी। कारपूर्ण रात्रि में मोटर की हेडलाइट पड़ने से सड़क चमचमा ठी थी।

एकाएक जयन्त ने ब्रेक लगा दी। झटके के साथ मोटर और शमीम जयन्त के ऊपर लुढ़क पड़ी। क्षण भर तक उसे अपने अंक में समेटे रहा, फिर एकाएक छोड़ कर

—

"शायद सड़क पर कोई आदमी पड़ा है। या तो मुर्दा हो बेहोश ..." कहता हुआ जयन्त मोटर से उतर पड़ा। इतने में खड़ाहट की आवाज हुई और पास की गली से कई एक हट्टे-

कई आदमियों ने आकर इन दोनों को चारों ओर से घेर लिया। वह आदमी भी जो अब तक बेहोशी का बहाना करके सड़क पर लेटा था, उठ खड़ा हुआ! शायद मोटर को रोकने के लिए ही बदमाशों ने ऐसा जाल रचा था। शमीम ने भय से जयन्त का हाथ पकड़ लिया।

"तुम लोगों के पास जो कुछ हो—यह बेश कीमती अंगूठी, सोने की घड़ी—सब कुछ हमारे हवाले कर दो...." बदमाशों के नायक ने कहा। साथ ही एक लम्बा सा लपलपाता हुआ छूरा जयन्त के सीने की ओर बढ़ा। शमीम दौड़कर जयन्त के शरीर से लिपटी और हाँफती हुई बोली—"डियर, माई डियर...." दूसरे क्षण उसका सर जयन्त की छाती पर लुढ़क पड़ा। शायद उसे मूर्छा आ गयी थी।

\+ + +

धीरे-धीरे उसने अपनी आंखें खोलीं। उसके सर में पीड़ा हो रही थी। फिर उसे यह देखकर महान् आश्चर्य हुआ कि इस समय वह एक सजे हुए कमरे में गद्देदार पलंग पर लेटी हुई है और उसका सर किसी की सुखमय गोद में पड़ा हुआ है। उसे जैसे एक आनन्द की अनुभूति हुई। इतना मादकता पूर्ण था यह आनन्द कि वह अपने को भूल-सी गई। उसके हृदय की स्पन्दनगति तीव्र होने लगी। उसकी रतनारी आँखें नशे के बोझ से ढक गईं। उसी समय किसी ने धीरे से उसके सिर पर अपना हाथ रख दिया। वह चौंक पड़ी, उस अचानक स्पर्श से।

उसने पुनः अपनी आँखें खोलीं। जयन्त का सुन्दर मुस्कराता हुआ मुख, ठीक उसके ऊपर था। वह सहम गई—आरक्त कपोलों पर लज्जा की लालिमा छा गई। उसने उठने का प्रयत्न किया, तभी जयन्त ने मूक संकेत किया—"उठने की कोशिश न करो, दर्द बढ़ जायगा...."

"मुझे छोड़ दो, मुझे जरा भी दर्द नहीं..."

"मगर तुम्हारे उठने से मुझे दर्द होगा, शमीम !" जयन्त के स्वर में विवशता थी। शमीम उठने का प्रयत्न करने लगी तो जयन्त ने उसे अपने शरीर में अवेष्ठित कर लिया। दोनों एक जान एक शरीर हो गये। उस सुख का अनुभव दोनों के लिए नूतन और आल्हादपूर्ण था।

शमीम कुछ न बोली। वह निश्चेष्ट होकर जयन्त के अंक में पड़ी रही। उसके नेत्रों में मादकतापूर्ण बेहोशी थी, उसके अंग-प्रत्यंग निश्चल थे, उसकी भाव-भंगिमा वैकल्यपूर्ण थी–और होंठ काँप रहे थे आवेग से। जयन्त भी मौन था, मगर... मगर उसका मुख शमीम के सौन्दर्यपूर्ण चेहरे के सन्निकट होता जा रहा था। उसके होंठ शमीम के उष्ण अधरों का स्पर्श करने के लिए व्यग्र थे।

दूसरे ही क्षण शमीम काँप उठी—उसके होंठो पर अत्यधिक मादक स्पर्श हुआ था !—"मुझे छोड़ दो–जाने दो..." उसने अस्त-व्यस्त स्वर में कहा।

"शमीम !"

"अब्बा मेरे इन्तजार में होंगे—तुम जाने दो मुझे...."

"मैंने उन्हें फ़ोन से खबर दे दी है, कि आज तुम मेरे यहाँ ही रहोगी। उनकी फ़िक्र न करो...."

"अच्छा तो यह तुम्हारा कमरा है..." अब्बा की ओर से शंका निवृत हो जाने पर उसने पूछा।

"हाँ ! पसन्द आया तुम्हें ?"

"मगर मैं यहाँ कैसे आ पहुँची और उन बदमाशों का क्या हुआ ?"

"उनकी बात मैं फिर कभी बताऊँगा—इस समय...."

घड़ी ने टन टन करके रात को दो बजने की सूचना दी। शमीम बोली—"अब तुम भी आराम करो....मगर...."

"चिन्ता की कोई बात नहीं, मैं बगल के कमरे में सो जाऊँगा ...." जयन्त हँस पड़ा। शमीम शरमा गई। कुछ देर तक सन्नाटा रहा।

"शमीम...." उसने पुकारा। शमीम ने उसकी ओर उनींदी आँखों से देखा—"पहिले तुम्हारे दिल में मेरी ओर से इतनी झिझक क्यों थी ?"

"तुम क्या जानोगे उस झिझक का मतलब ? तुम मर्द हो, औरतों के दिल की गहराई तक पहुँचना तुम्हारी ताकत के बाहर की बात है।"

अब जयन्त को आश्चर्य हुआ—क्या शमीम पहले से ही मेरे प्रेम-पास में आबद्ध रही ? मगर स्त्री-सुलभ लज्जा के कारण ऊपर से बनावटी क्रोध दिखलाती रही हो....हो सकता है यह। अपनी-अपनी प्रकृति है, अपनी-अपनी अदा है !

* * *

"जयन्त !...." उसके पिता ने पुकारा। जयन्त रुक गया ! उसे लगा कि मानों पिता के स्वर से कठोरता टपक रही हो। वह आकर सेठ केशवराव के सामने खड़ा हो गया—"क्या है पिता जी ?" उसने नम्र स्वर से पूछा।

"वह तेरे कमरे में कौन है ?"

"वह जमाल चाचा की लड़की है पिताजी, जो उस दिन आप की नोट बुक लेकर आई थी...."

"यहाँ उसके आने का कारण ?"

"कल हम दोनों सिनेमा देखने गये थे, वहीं उसकी तबीयत खराब हो गई थी, इसलिए...."

सेठ केशवराव भभक उठे। जयन्त ने उनके चेहरे को ओर देखा, जो इस समय आवेश में तमतमाया हुआ था।

"जयन्त !"

"जी पिताजी !"

"मैं देख रहा हूँ कि अब मुझे तेरी स्वतन्त्रता में हस्तक्षेप करना पड़ेगा। मैं नहीं चाहता कि तू ऐसे आदमियों से सम्पर्क करे, जिन्हें मैं हेय समझता ....हूँ"

"........"

"मैं नहीं चाहता कि तू अपना पवित्र धर्म छोड़कर, अन्य धर्मावलम्बियों के सम्पर्क में रहे...."

जयन्त चुप रहा।

"मैं देख रहा हूँ, कि तू जमाल के सम्पर्क से अत्यधिक प्रभावित हो गया है, मगर मैं स्पष्ट बता देना चाहता हूँ कि वह मुसलमान है—और मैं मुसलमानों का सम्पर्क बिल्कुल पसन्द नहीं करता। समाज में मेरी धाक है, शहर के लोग मेरा आदर करते हैं—इसलिए तुझे कोई ऐसा काम नहीं करना चाहिये जिससे मेरी प्रतिष्ठा पर कलंक लगने की सम्भावना हो —"

जयन्त चुप रहा। आज उसने पिता का वास्तविक रूप देखा। आज जमाल चाचा की कही हुई बातें उसे सत्य प्रतीत हुई। अब उसने जाना कि इतना वैभवशाली होते हुए भी, उसके पिता धर्म तथा समाज की रूढ़ियों में आबद्ध एक असहाय व्यक्ति है।

वह चुपचाप अपने कमरे में आया। शमीम चारपाई पर बैठी थी—"क्या कह रहे थे, बाबूजी ?" उसने पूछा।

"कुछ नहीं !...."—जयन्त की आकृति गम्भीर हो गई।

"मैंने सब कुछ सुन लिया है....तुम नाहक ही मुझे यहां लाये...."शमीम ने एक दीर्घ निःश्वास छोड़ते हुए कहा।

"ऐसा न कहो, शमीम !" जयन्त विह्वल हो उठा—"कहो ऐसी बात। तुम्हारी सलोनी मुखाकृति ने मेरे हृदय में बसेरा कर लिया है, अब ऐसी बातें कह कर मुझे दुःख न दो - की तो हमेशा की यह आदत है...."

शमीम चुप रही। उसके नेत्रों में आँसू तैरने लगे थे।

"शमीम !" जयन्त ने भर्राये हुए स्वर में पुकारा।

"मेरे सनम !" उठकर वह जयन्त से लिपट गई—"धोखा न देना...."



६

जान से अजीज !

"तुम्हारी मीठी-मीठी बातों ने, तुम्हारे भोले-भोले चेहरे " आखिर मुझे अपनी ओर खींच ही लिया। सच कहती हूँ, सनम ! जो बात आज तक तुमसे छुपाने की कोशिश करती आ रही थी, वही अब तुम पर जाहिर करने जा रही हूँ—और जाहिर कर दूंगी। तुम चाहे सुनो या न सुनो, मगर मैं तो अपना राजे-दर्द तुम्हें जरूर सुनाऊंगी। तुम सुनकर खुश होगे या नाखुश नहीं जानती मैं, मगर तुम्हें अपने दिल का राज सुनाने से मेरा कलेजा हल्का हो जायगा, मेरी परेशानी दूर हो जायगी,

तबियत को राहत हासिल होगी। मैं जानती हूँ कि तुम्हें जरूरी कामों से फुर्सत न होगी, तुम अपने रोजगार की बातें छोड़कर मेरा लम्बा-सा खत पढ़ना न चाहोगे, मगर मेरे खुदा ? मुझ पर थोड़ा रहम करना और दिलजले की आह से निकले हुए ये चन्द अल्फाज पढ़ लेना मिहरबानी करके, मैं शुक्रगुजार हूँगी।

उफ ! किस बुरी घड़ी में हमारा-तुम्हारा मिलन हुआ था मेरे सनम ? याद है मुझे वह दिन, जिस दिन मैं क्लब में आई थी। मैंने तुम्हें देखा और तुमने मुझे—देखते ही मेरे दिल की धड़कन बढ़ गई थी। सोचा मैंने, कितनी प्यारी ! कितनी खुशनुमा है तुम्हारी सूरत ! उसके चन्द दिनों बाद ही क्लब का सलाना जलसा हुआ। तुम्हारे शरारतभरे हाथों से फेंका हुआ वह कागज का टुकड़ा मुझ पर आ लगा—कितनी खुशी हुई थी मुझे, मैं बयान नहीं कर सकती। मगर मुझे अपना राजेदिल छिपाने के लिए तुम पर गुस्सा दिखाना पड़ा। उसके बाद भी चन्द दिनों तक मैं तुमसे अच्छी तरह पेश नहीं आई। आज बताती हूँ। इसका सबब यही था कि मैं तुम्हें प्यार करती थी, मेरे दिल में तुम्हारी भोली सूरत आ बसी थी और यही था झिझक का सबब ! मगर तुम समझ नहीं सके थे—तुम समझते थे कि मेरा गुस्सा असली है उफ् ! मेरे भोले सनम ! तुम्हें मालूम नहीं था कि मुहब्बत औरतों में झिझक पैदा कर देती है, दिल से चाहने पर भी ऊपर से वे बनावटी झिझक दिखलाती हैं—इसे ही तुम मर्द लोग कहते हो 'अदा'—मगर अफसोस ! मेरी इस अदा को तुम महसूस न कर सके, तुम्हें मालूम न हो सका कि हाथी के दाँत खाने के और होते हैं, दिखाने के और। तुम सुनकर ताज्जुब करोगे कि तुमसे उस पहली ही 'देखा-देखी' में, मैं अपनी एक कीमती चीज खो

बैठी थी   दिल !

मेरा राजे-दर्द न समझे तुम, फिर भी अपनी छेड़खानी—अपनी शरारत तुमने जारी रखी। उफ ! कितनी प्यारी लगती थी तुम्हारी वे शरारतभरी हरकतें ? वह कागज जिस पर तुमने अपनी प्यारी अंगुलियों से लिखा था—'मोरा जियरा बेहाल'—अब भी मेरे पास, मेरी पाकेट की जेब में रखा हुआ है। वह कागज ही तो आजकल मेरा जिन्दगी का सहारा है। तुम मुझे भूल सकते हो, मगर वह कागज इतना जालिम नहीं ! आज पन्द्रह दिनों से तुम्हारी प्यारी सूरत देखने को नहीं मिली। क्लब में भी आना छोड़ दिया तुमने। इस बेरहमी का क्या सबब है। बाबूजी ने तुम पर ज्यादा सख्ती शुरू कर दी है क्या ?

उफ ! खत बेहद लम्बा होता जा रहा हैं, मगर दिल का गुब्बार खतम होने का नाम ही नहीं लेता। दिल कहता है लिखे जा, खूब लिखे जा, मगर तुम पढ़ ही न सको तब ? तुम्हें इतनी फुरसत ही न मिले तो ? खैर ! तुम अपनी करो, मैं अपनी ! मैं तुम्हारी इबादत करती रहूँ, तुम मुझे ठुकराते रहो।

अब्बा मेरी बेचैनी से बहुत परेशान रहते है। मुझसे भी ज्यादा परेशान ! मैं खाना नहीं चाहती, सिर्फ तुम्हारी याद में बैठे-बैठे सारी रात गुजार देना चाहती हूँ, मगर वे हठकर मुझे सुलाते हैं ! उनके चेहरे से ऐसा मालूम होता है जैसे वे मेरे दिल का सारा राज जान गये हों।

"शमीम !...." अब्बा ने पुकारा। मैं कुर्सी पर अनमनी-सी बैठी थी, मैंने देखा अब्बा की आवाज भर्राई हुई है—"यह तेरी क्या हालत हुई जा रही है बेटी !"

"कुछ नहीं अब्बा ! मुझे कुछ नहीं हुआ है...." मैंने कहा।

"कुछ नहीं हुआ है ?" अब्बा ने सिर पर हाथ रख दिया—"कहती है कुछ नहीं हुआ....नादान कहीं की ! मैं बुजुर्ग हो गया हूँ, तू समझती है दुनियाँ को पढ़ने की ताकत मुझमें नहीं...."

मैं सन्न रह गई। सोचने लगी, कहीं अब्बा को मेरे दिल की बात मालूम तो नहीं हो गई है ? मगर मैं चुप रही, कहती क्या ? लाचार उन्होंने फिर पूछा—"शमीम !...बोल बेटा, तुझे कौन-सी तकलीफ है ?"

"सर में न जाने क्यों दर्द रहता है, अब्बा।" मैंने टालने की गरज से कह दिया।

"सर में दर्द रहता है या...." एकाएक अब्बा रुक गये—"क्यों सर में दर्द होता है ? जरा आइने मे अपनी सूरत तो देख, कितनी सूख गई हैं तू ? फिर भी कुछ ठीक-ठीक बताती नहीं...."

'क्या बताऊँ, अब्बा ?"

"अपने दर्द की दवा बता—और क्या बतायेगी ?...." अब्बा मुस्करा पड़े—"कह तो जयन्त को बुला दूँ..." कहते-कहते अब्बा का चेहरा ग़मगीन हो गया। मैं काँप उठी। मुझे लगा मानों अब्बा की बातों का यही मतलब हो कि मैं तुम्हें प्यार करती हूँ और तुम्हारे आने से मेरा दर्द रफा हो जायगा। मैंने दोनों हथेलियों से अपना मुँह ढक लिया। अब्बा कहने लगे—"उसके आने से तुझे जरूर राहत हासिल होगी। बहुत अच्छा लड़का है वह—उसके साथ जाकर कुछ देर तक घूम आना...."

"नहीं अब्बा ? जाने दीजिये। वे शायद आने की तकलीफ न करें...." मैंने कहा।

अब्बा चुपचाप कुर्सी पर बैठ गये। कुछ देर तक न जाने क्या सोचते रहे, फिर उठते हुए बोले —"आज एक बहुत अच्छा खेल लगा है। चलो देख आयें!"

मैंने इन्कार किया, मगर उन्होंने नहीं माना, लाचार मुझे जाना ही पड़ा। खेल देखने में जरा भी दिल न लगा, तुम जो साथ में नहीं थे। लौटती बार शिराज मिला था और कन्धे हिलाकर मेरी ओर घूरकर देखा भी था, कितना शैतान है वह! जी में आया कि चट्ट-चट्ट उसके गालों पर तमाचे जड़ दूँ, ठीक वैसे ही जैसे तुमने उस दिन जड़ दिये थे।

खैर? छोड़ती हूँ, खत को लम्बी करने वाली इन बातों को मुझे उम्मीद है कि आज जरूर तुम क्लब में मुलाकात करने की मिहरबानी करोगे। क्या हुआ जो तुम इतने दिनों से, न जाने किस जमीन की तह में जा छिपे हो। आना! मेरे सनम, जरूर आना!

बाकी मिलने पर

आपकी शमीम।

* * * *

मेरे दिल की रानी!

तुम्हारा पत्र अभी-अभी ही मिला है। पढ़कर ऐसा मालूम होता हैं कि तुम पूरी कवियित्री बन गई हो। तुम्हारी तरह अपने हृदय की व्यथा व्यक्त करने में मैं असमर्थ हूँ, क्योंकि मुझमें उतनी भावुकता नहीं, उतनी योग्यता नहीं! सोचता हूँ कि काश, मैं भी तुम्हारी ही तरह मादक पत्र लिख सकता!

तुम्हारा पत्र! उफ! न पूछो उसकी बात! एक एक शब्द से, एक एक लाइन से, तुम्हारी प्रतिमा झांक रही है। मुझे तो

ऐसा मालूम होता है कि वह सारा पत्र मेरा ही इतिहास है
ारा नहीं। शमीम ! तुमने जो कुछ अपने पत्र में लिखा हैं, अक्षरशः मेरे उपर घटित होता है। उतनी व्यथा, उतनी उद्विग्नता मेरे हृदय से भी हैं—और यह देखकर मुझे हार्दिक ्नता हो रही है, कि मेरी तरह तुम भी उद्विग्न हो, तुम्हारे हृदय में भी मेरे लिए स्थान है यह कितनी प्रसन्नता की बात है माई हार्ट !

तुम नाराज हो ? क्यों न होगी ? मेरा अपराध भी तो बहुत है, मगर मैं क्या करूँ, लाचार कर दिया गया हूँ। पिताजी की नाराजगी बढ़ती जा रही है। उन्हें प्रसन्न रखने के ख्याल से ही इधर पन्द्रह दिनों से मैं बराबर घर ही पर रहा—कहीं गया , किसी से मिला नहीं दिल पर पत्थर रख लिया है मैंने। मगर दुनिया तो दुनिया है। उसे किसी के दुःख की, किसी के तकलीफ की परवाह कहाँ।

पहले की तुम्हारी गुस्सैल अदा का ख्याल कर मुझे, आश्चर्य है। उस समय मैंने एक क्षण के लिए भी यह नहीं सोचा कि तुम्हें इस प्रकार अपने दिल में बसा सकूँगा। यह मेरे ग में आया ही नहीं था, कि मेरी ही तरह तुम भी कभी हो उठोगी। जान से भी अजीज, मेरी प्यारी शमीम ! क्या बता सकती हो कि आखिर हम अपने ही जैसे एक मानव लिए इतने बेकरार, इतने व्यग्र क्यों हो उठते हैं ? क्यों एक में समा जाने की तमन्ना करने लगते हैं ?

मुझे अफसोस है कि इतने दिनों के बीच में तुमसे मिल न का, मगर मेरे दिल पर जो कुछ बीती, वह मैं ही जानता हूँ। कहता हूँ शमीम ! मगर तुम समझ न सकोगी और न मैं मझा सकूँगा। प्रेम-संबंध में होने वाली पीड़ा को कोई समझ

सका है कहीं ? नहीं, मेरी हृदय—देवी नहीं ! यह समझने की बात नहीं, सिर्फ महसूस करने की बात है।

तुमने मिलने को लिखा है, बुलाया है—मैं मिलूँगा अवश्य मिलूँगा और अपने इतने दिनों के सारे अरमानों को तुम्हारे श्रीचरणों पर उड़ेल दूँगा। मेरे रोम-रोम में, मेरी नस-नस में तुम्हारा बसेरा है ! अगर देख सकती हो तो, मेरा हृदय चीरकर देखो—वहाँ अपनी मंजुल मूर्ति के सिवा, ढूढ़ने पर तुम कुछ भी न पाओगी !

मगर दिल झिझक रहा है, हृदय काँप रहा है—क्यों ? जानना चाहती हो शमीम ! अभी तक मैंने तुमसे एक भेद छिपा रखा था, उसे बताने में मुझे झिझक लग रही है, मगर बिना बताये दिल को राहत नहीं मिलेगी। सचमुच मेंने नादानी की थी, मगर उस नादानी के ही कारण तुम मुझे मिली।

तुम्हें याद होगा, उस दिन जबकि हम और तुम सिनेमा देखकर लौट रहे थे, तो कुछ बदमाशों ने हमारी मोटर घेर ली थी। तुम डर कर मेरे कलेजे से जा लगी थी—उफ ! कितना सुखद था तुम्हारे शरीर का वह स्पर्श ! कितना मादक था वह मधुर मिलन। उस मधुर-मिलन के लिए ही तो मैंने वह सारा खेल रचा था, सच कहता हूँ आश्चर्य न करो ...वह मेरा ही खेल था, मेरी ही नादानी थी। तुम्हारी ही झिझक से ऊबकर अपने एक मित्र सारंग की सहायता से मैंने यह नाटक अभिनीत किया था। जिस समय तुम्हारा भयभीत शरीर मेरे अंक-पाश में था, उस समय मेरा मित्र सारंग, बदमाशों का वही नायक खड़ा-खड़ा मुस्करा रहा था।

शमीम ! मेरी प्यारी शमीम। क्या मुझे माफ कर सकती हो—जरूर माफ कर सकती हो—तुम्हें माफ करना ही होगा—

कर देता मेरी अच्छी शमीम ! आज शाम को मिलूँगा क्लब में । तुम आओगी ही। अब पत्र समाप्त करता हूँ। पिताजी चले आ रहे हैं और नौकर को न जाने क्यों बिगड़ रहे हैं। विदा !—

तुम्हारा जयन्त ।



७

एक युग के पश्चात्, एक लम्बी अवधि के बाद आज दोनों की परस्पर भेंट हुई थी। स्नेहसिक्त एवं रसपूर्ण वार्तालाप में दोनों डूब उतरा रहे थे। क्लब के प्राइवेट रूम में बैठे हुए वे दोनों अपने आप को भूल गये थे—भूल गये थे कि वे इस समय स्वर्ग में नहीं वरन् इसी मानवी संसार में हैं, जहाँ के अधम प्राणी तनिक, सी बात को लेकर तिल का ताड़ बना सकते हैं, पत्थर पर दूब उगा सकते हैं।

"तुम्हारा पत्र पढ़कर हृदय में कितनी व्यथा हुई, कह नहीं सकता...." जयन्त बोला—"मगर लाचार था...लाचार था अपने पिता की आज्ञा से..." जयन्त ने दरवाजे की ओर देखा, जो बन्द नहीं था, केवल भिड़काया हुआ था।—

"तो इसका मतलब यही हुआ कि हमारी किस्मत में अन्धेरा ही अन्धेरा है !" शमीम उदास स्वर में बोली।

"नहीं नहीं शमीम ! उस अन्धेरे में ही प्रेम की ज्योति रास्ता दिखालायेगी। हताश होने की जरूरत नहीं। मुझपर अविश्वास न करो। मैं सारी दुनियाँ को ठुकरा कर, पिता के

ऐश्वर्य पर लात मार कर, सम्पूर्ण वैभव का परित्याग कर, प्राप्त करूँगा। दुनिया की, समाज की मुझे परवाह नहीं।"

"उफ कितनी मीठी, कितनी प्यारी लग रही है तुम्हारी बातें! मगर न जाने क्यों दिल कांप रहा है? तुम्हारी बातें सुनकर मुझे डर-सा लग रहा है। ऐसा न हो कि...."

"ऐसा नहीं होगा शमीम !" जयन्त ने प्यार से शमीम की ठुड्डी हिला दी। शमीम का सर लटक कर उसके कन्धे से लगा। दोनों एक ही कोच पर बैठे थे।

"दुनिया के खिलाफ सर उठाने की ताकत अभी हम ल में नहीं आई है। कहना जितना आसान है, करना उतना ही मुश्किल है। मुझसे दगा न करना- छल न करना मेरे, सनम !...."

"शमीम !" —जयन्त ने विह्वल वाणी में पुकारा।

"जयन्त !" शमीम के कण्ठ से अवरुद्ध स्वर निकला।

"माफ कीजियेगा..." पीछे से आवाज आई। जयन्त और शमीम चौंककर अलग हो गये। आश्चर्यविस्फारित नेत्रों से उन्होंने देखा कि दरवाजा थोड़ा-सा खुला है और शिराज खड़ा हुआ उनकी ओर कुटिलतापूर्ण दृष्टि से देख रहा है।

"माफ कीजियेगा !...." वह दो कदम आगे बढ़ आया। जयन्त ने अपनी आस्तीन ऊपर चढ़ाई—"इसकी जरूरत नहीं..." शिराज बोला—"मुझसे गलती हुई कि ऐसे बेवक्त आप लोगों को तकलीफ दी। अगर जानता होता कि आप दोनों ऐसे 'पोज' हैं तो..."

"तुम्हें यहाँ आने की क्या जरूरत पड़ गई ?"—जयन्त गरज पड़ा।

"जरूरत ?...." शिराज ने कन्धे हिलाये, जरा-सी नाक सिकोड़ कर, मुँह बिचकाया, फिर बोला—"जरूरत थी, तभी तो

मास्टर जयन्त ! तुम्हें इसी वक्त सेक्रेटरी साहब याद कर रहे हैं। तुम जाकर उनसे मुलाकात करने की मिहरबानी करो, तब तक मैं भी मिस शमीम से एक जरूरी बात कर लूं।"

शिराज ने रुककर जयन्त के मुख को ध्यानपूर्वक देखा— "तुम इतने नाखुश क्यों रहते हो मुझ पर ? देखो—अपनी आँखें जरा देखो, गुस्से से लाल हैं। जरा भी शराफत, जरा भी एटीकेट नहीं है तुममें ? तुम समझते क्या हो अपने को ? बोलो !"

"तुम हम लोगों से बराबर शरारत करने की जुर्रत क्यों करते हो ?"

"हम लोग ?···वाह ! मिस शमीम को भी अपने साथ शामिल कर लिया तुमने—मालूम पड़ता है जैसे तुम्हारा उस पर पूरा हक हो गया है। हो ही गया है तो खुशी की बात है...." शिराज हँसा—"तुम कहते हो मेरी शरारत है—बल्लाह ! बात-बात पर मेरी बेइज्जती करो मेरे मुँह पर थप्पड़ मारो और जब मैं तुम्हारी नादानी पर तरस खाकर तुम्हें माफ कर दूं-तो तुम कहो कि यह मेरी शरारत है....शर्म करो जरा मेरे भाई।"

जयन्त क्रोधित हो उठा। शिराज के बात करने का ढंग ही ऐसा था कि उसकी बातें न्योचित होते हुए भी व्यंगपूर्ण होती थीं—यही था जयन्त के क्रोध का कारण। मगर बात आगे न बढ़ने पाई, क्योंकि उसी समय क्लब के चपरासी ने आकर जयन्त को सूचना दी कि उसके पिता का फोन आया है। जयन्त सेक्रेटरी के कमरे की ओर बढ़ा।

"मिस शमीम ?..."शिराज शमीम के पास आकर खड़ा हो गया—"आप उसे मना कर दे, नाहक मेरे रास्ते में पड़कर शामत मोल न ले। आपकी नजरों में वह चाहे जो कुछ हो मगर मेरी नजरों में वह एक जलील है ? समझी आप...."

"आप तशरीफ ले जायँ !...."

"माफ कीजियेगा, मिस शमीम ! मैं एक बहुत जरूरी इत्तिला आपको देने आया हूँ। आपको शायद मेरी बातें अच्छी न लगें, लेकिन उसमें आपका ही फायदा है, यह मैं खूब जानता हूँ इसलिए आप को साफ-साफ बता देना चाहता हूँ, कि आप जिस रास्ते से गुजर रही है, वह आपके बरबादी का वायस हो सकता है...."

"आप मिहरबानी करके चले जायँ—अभी, इसी वक्त।"

शमीम के होंठ काँप रहे थे।

"मैं देख रहा हूँ कि आपके दिल में उस आवारा जयन्त के लिए मुहब्बत बढ़ती जा रही है—यह आगे चलकर आप लोगों के लिए खतरनाक साबित हो सकती है।"

"मुहब्बत में तकलीफ और खतरनाक बातों के लिए जगह नहीं, मिस्टर शिराज !"

"ऐसी मुहब्बत, मुहब्बत नहीं कही जाती, मिस शमीम ! जोशे-जवानी कहते हैं इसे। दूसरे जयन्त से आपकी मुहब्बत निभा ही नहीं सकती क्योंकि हिन्दुओं की जमात आपको कबूल नहीं करेगी और जयन्त में इतना हिम्मत नहीं कि वह सारी जमात पर लात मार दे सिर्फ आपके लिए। अभी चाहे जोश में आकर वह जितनी कसमें खाये, मगर याद रखियेगा, आपके लिए वह अपनी जमात नहीं छोड़ सकता। देख लीजियेगा, वक्त पड़ने पर वह आपके कलेजे पर यों लात मारकर चल देगा—" और सचमुच शिराज ने जोरों से अपना पैर जमीन पर सटक दिया। शमीम काँप उठी। उसे लगा, जैसे वह ठीक उसके कलेजे पर आकर बैठा हो। उसने अपने दोनों हाथों से आँखें मूँद लीं।

"मुझे अफसोस है, मिस शमीम !..." शिराज ने पुनः मुँह सिकोड़ा। उसकी सुन्दर मुखाकृति भद्दी लगने लगी—"मेरा जरा भी इरादा आपको तकलीफ पहुँचाने का नहीं। मगर मजबूर हो गया हूँ, आपको गलती देखकर..." शिराज ने आत्मीयता से शमीम के कन्धे पर हाथ रख दिया। शमीम चौंक कर पीछे हट गई। उसी समय शिराज के गालों पर चट्ट-चट्ट किसी की चौड़ी हथेली जा पड़ी। शिराज तिलमिला उठा। आश्चर्यान्वित आँखों से उसने देखा, क्रोध से काँपता हुआ जयन्त खड़ा है।

'शर्म नहीं आती तुम्हें ?'' जयन्त गरजा।

"तुम ..." शिराज क्रोधित हो उठा—"तुम अपने को समझते क्या हो ?....तुम्हारी यह हिम्मत !...."लपककर शिराज ने जयन्त का गला पकड़ लिया और उसे दूर ढकेल दिया—'क्यों खामखाँ मौत बुलाते हो, मिस्टर, जयन्त ;" शिराज एकाएक हंस पड़ा। उसका क्रोध एक क्षण में ही विलीन हो गया, भाव-परिवर्तन करना उसे खूब आता था।

मगर जयन्त बेतरह अपमानित हुआ था। उसका क्रोध असह्य हो गया। उसने लपक कर मेज पर पड़ा हुआ रूल उठा लिया और दूसरे ही क्षण वह रूल खट्ट से शिराज के सिर पर जा गिरा। उसके सर से रक्त की धारा प्रवाहित हो चली। वह कराह उठा।

"क्या है ! है क्या मिस्टर जयन्त ?" कराह का स्वर सुन कर क्लब के सेक्रेटरी साहब झपटते हुए आये और जयन्त का हाथ पकड़ लिया उन्होंने।

"बात यह है, सेक्रेटरी साहब !..." किसी के बोलने के पहले ही शिराज बोल उठा, उसके मुख पर क्रोध की जगह आश्चर्यमिश्रित मुस्कराहट खेल रही थी—"बात यह कि हमारे कालेज के 'एक्सड्रामेटिक क्लब' का हाल ही में एक ड्रामा होने

वाला है, उसी के लिये हम लोग शेक्सपीयर के एक 'प्ले' रिहर्सल कर रहे थे। बात इतनी ही है कि मेरे इस नादान ने अपना पार्ट जरा 'रियलिस्टक' तरीके से अदा कर दिया इसलिये यह खून...."

"मैंने समझा...."

"आपने गलत समझ लिया, मेहरबानी करके तशरीफ जायें..." सेक्रेटरी साहब चले गये! शिराज शमीम की घूमा—"अगर मैंने कोई बेजा हरकत की हो तो मुझे माफ येगा, मिश शमीम!" उसने अजीब ढङ्ग मे कन्धे हिलाये—' भी माफ करना दोस्त!" उसने जयन्त से कहा और बढ़ दरवाजे की ओर।

जयन्त ने अपना माथा पकड़ लिया। उफ! कितना विचि है यह युवक! मेरी समझ में नहीं आता कि मुझे यह क्यों करता जाता है? यह देवता है या शैतान?

८

मोटर का दरवाजा खुला और उस पर से जयन्त और उतरे। पिछली घटना के बाद आज दस दिन पर वे दोनों में आये थे। खट-खट सीढ़ियाँ चढ़ते हुए वे क्लब के दरवाजे पर पहुँचे। दरवाजे पर ही शिराज खड़ा था। इन दोनों को वह दो कदम पीछे हटा, झुककर एक लम्बा सलाम किया, फिर बोला—"मुबारक हो!"—उसके मुख पर थी हंसी

हवर भी था व्यंग का आभास, मगर जयन्त और शमीम ने उस पर ध्यान न दिया और क्लब का हाल की ओर बढ़ गये।

उस समय क्लब में खूब चहल-पहल थी। रात्रि के आठ बजे गये थे। विद्युत की प्रखर ज्योति से क्लब की चित्र-चित्रित दीवारें जगमगा रही थी, परन्तु आश्चर्य! इन दोनों के आते ही क्लब में एक नवीन वातावरण उपस्थित हो गया। कौतूहल के साथ-साथ जयन्त ने एक महान परिवर्तन पर लक्ष्य किया। उसने ध्यानपूर्वक देखा, कि लगभग सभी उपस्थित सदस्यों की आँखें उनकी ही ओर उठी हुई हैं—और उन आँखों में कौतूहलता का विशाल सागर लहरा रहा है।

यह सच था कि इन दोनों के आते ही एक प्रकार से सारे ठप हो गये थे और सभो सदस्यों में कानाफूसी होने लगी , एवं उत्सुक आँखों से इन दोनों की ओर केत किये जाने थे। जयन्त यह परिवर्तन देखकर महान आश्चार्यान्वित हुआ। खर इस परिवतंतन का कारण क्या है? लोग हम दोनों की इस प्रकार उत्सुक नेत्रों से देखते हुए क्या संकेत कर रहे हैं?— वहाँ से उठकर कामनरूम में आये, मगर यहाँ भी उन्हें लोगों उत्सुकतापूर्ण दृष्टियों का शिकार होना पड़ा। दोनों जाकर ग-अलग कुर्सियों पर बैठ गये और लोगों के इस प्रकार के वहार पर विचार करने लगे।

कामनरूम के एक कोने में दो दोस्त बैठे हुए थे—"देखा ?...." एक ने कहा—"कैसा रंग-ढंग है दोनों का? समाज , दुनिया को ठुकरा कर स्वराज्य स्थाथित करना चाहते हैं ये? !"

"क्या कहते हो?...." दूसरा धीरे से बोला, मगर जयन्त

और शमीम को सुनाने के लिये काफी जोर की आवाज में—"मे
प्रेमी है न ! जवानी का जोश है—भले बुरे का विचार कहाँ ?
बड़े सेठ का लड़का और यह हरकत ? नाक काट ली सारे समा
को !"

बात बहुत बढ़ गई थी। जयन्त और शमीम की
के विषय में, क्लब में ही नहीं, वरन सारे शहर में चर्चा हो
थी ! जयन्त एक उच्च घराने का लड़का था, इसलिए
इस जरा-सी बात का सामूहिक रूप से फैल जाना कोई अ
जनक बात नहीं थी। इन पन्द्रह दिनों के भीतर जयन्त
शमीम बराबर मिलते रहते थे और यही बात समाज के कानों
गरम तेल की तरह बूँद-बूँद चू रही थी। भला एक
युवक और मुस्लिम युवती परस्पर मिलें, वह भी
में - यह समाज के, अन्ध-विश्वासी लोगों को, कब सह्य
सकता है ?

यही कारण था कि जयन्त और शमीम का प्रेम आज
के सदस्यों की बातचीत का प्रधान विषय बन गया था।
हैरान था। शमीम सब कुछ समझ रही थी, मगर लाचार थे
दोनों असहाय प्राणी ! कैसे वे दुनियाँ वालों को समझा सकते
कि उनका प्रेम सात्विक है और उसमें समाज के कठोर
शिथिलता नहीं उत्पन्न कर सकती ? कैसे वे धर्म के ठेकेदारों
बता सकते थे कि उनका यह प्रेम, वासनामय कुत्सत
नहीं है और धर्म की दुरुह कठिनाइयाँ तथा सत्यानाशी
उनके प्रेम में बाधाउपस्थित नहीं कर सकती।

कामनरूम के वातावरण से ऊबकर दोनों प्राइवेट रूम
चले आये। एक कोच पर बैठते हुए शमीम बोली—"यह
क्या हो रहा है, मेरे सनम ?"

"यह बात !...." धम्म से जयन्त शमीम को बगल में बैठ गया—"यह सब शिराज की बदमाशी है। उसी ने सब जगह हम दोनों की बदनामी फैलायी है। वही शैतान इस तरह बदला ले रहा है हमसे। "उफ !" परिस्थिति से विह्वल होकर वह कुछ देर के लिए विचार-मग्न हो गया।

"दुनिया वाले पाक मुहब्बत के खिलाफ क्यों इतना चीखते-चिल्लाते हैं ?" शमीम ने निराश स्वर में पूछा।

"शमीम !" जयन्त ने कहा—"दुनिया वालों का दिल हमारी तरह साफ नहीं। वे अपनी तरह ही एक दूसरे के हृदय में कलुषता ढूढ़ते हैं—अच्छाई नहीं, बुराई ढूढ़ते हैं ऐसे हैं दुनियाँ वाले ! नीच ! अधम !"

"तुम्हारा ख्याल गलत है, मिस्टर जयन्त !" शिराज की पेटेण्ट आवाज पीछे से सुनाई पड़ी—"दुनिया वाले बेवकूफ नहीं, अन्धे नहीं, नाकाबिल नहीं—मुहब्बत ही इन्सान को बेवकूफ अन्धा और नाकाबिल बना देती है। मुझे अफसोस के साथ कहना पड़ता है कि आप लोगों की आंखों पर मुहब्बत ने बेतरह काला परदा डाल रखा है और आप लोग उस दुनिया को ही भूल जाना चाहते हैं, जिसमें आप लोगों को रहना है, जिसमें आराम की जिन्दगी बसर करते हुए अपने दिन गुजारना है।"

जयन्त की आँखें आग उगलने लगीं।

"माफ करना दोस्त ! यह क्लब और प्राइवेट रूम तुम्हारी मिल्कियत नहीं है। क्लब का कोई मेम्बर यह गवारा नहीं कर सकता कि सिर्फ तुम्हीं इसे 'अकुपाई' किये रहो। यह प्राइवेट रूम क्यों बनाया गया है ? इसीलिए न कि जरूरत पड़ने पर चन्द मिनटों के लिए लोग अपना दिलो-दिमाग तरो-ताजा कर लें ?"

कोर्टशिप करने लिए नहीं बनाया गया है यह....'' शिराज के कन्धे जोर से हिले और वह दो कदम आगे बढ़ आया—''मुझे अफसोस है कि आप लोगों की इतनी बदनामी फैल गई....मैंने मिस शमीम को पहले ही होशियार कर दिया था, आज से पन्द्रह दिन पहले – उस दिन जब कि तुमने तैश में आकर मेरा सर जख्मी कर दिया था।''

''मैं बहुत बर्दास्त कर रहा हूँ, मिस्टर शिराज !''

''शुक्रिया !....मगर मुझे अफसोस के साथ तुम्हारी गलती दुरुस्त करनी पड़ रही है। बर्दाश्त मुझे करना पड़ रहा है। बर्दाश्त करने का कलेजा मेरे जैसा होता है, मेरे दोस्त !'' शिराज ने गर्व से अपने सीने पर हाथ रखा—''मैं अब भी कहता हूँ कि तुम मुझे समझ नहीं पाये हो। जिस दिन समझोगे उस दिन पछताना होगा तुम्हें—''

''साहबान !....''सेक्रेटरी साहब आ पहुँचे – मैं जरा आप लोगों का कीमती वक्त लेना चाहता हूँ। माफ कीजियेगा मिस्टर शिराज आप मिहरबानी करके...''

''कोई बात नहीं, मैं अभी बाहर चला जाता हूँ....'' और शिराज सिर नीचा किए हुए प्राइवेट रूम से बाहर हो गया।

''मिस्टर जयन्त !...'' सेक्रेटरी साहब के स्वर में विवशता टपक रही थी....''मुझे अफसोस के साथ आप लोगों को एक तकलीफदेह बात बतानी पड़ रही है। सब जगह आप दोनों के बारे में शर्मनाक अफवाहें फैल रही है। सिर्फ क्लब में ही नहीं, शहर में भी यही चर्चा जोरों पर है ! मुझे अफसोस है, मगर ऐसी बातें क्लब को बदनाम कर देने के लिए काफी हैं। प्रेसिडेण्ट साहब के कानो तक यह बात जा चुकी है और उन्हों ने यह पत्र

आपके लिए भेजा है। इसमें आप से प्रार्थना की गई है कि क्लब के मेम्बरशिप से आप लोग इस्तीफा दे दें। कम-से-कम तबतक के लिए जब तक इन अफवाहों का कोई वारा-न्यारा न हो जाय...." सेक्रेटरी साहब घूम पड़े और प्राइवेट रूप से बाहर हो गये।

अपमान! निरादर! दुर्व्यवहार!—जयन्त का मस्तिष्क चकरा गया। उसके ललाट पर पसीने की नन्हीं-नन्हीं बूँदें उभर आईं! हाथ काँपने लगे। उसने शमीम का हाथ पकड़ लिया और उसी क्षण क्लब से बाहर आ रहा। दोनों मोटर में आकर बैठ गये। शोफर को जयन्त ने मिर्जासाहब के घर चलने की आज्ञा दी—ये समाज के अधम जीव उन दोनों को पतित समझते हैं। जयन्त विक्षिप्त सा हो उठा। शमीम गुम-सुम बैठी रही।

* * *

"जमाल चाचा...."

"बेटा जयन्त! मेरी बात मानों और जरा दुनियाँ की ओर आँख उठा कर देखो। देखो आज शहर भर के रईसों में तुम्हारी चर्चा है। इतनी बुरी अफवाह फैली है कि क्या कहूँ...." मिर्जा-साहब बोले। जयन्त चुपचाप खड़ा रहा, शमीम भी उसके बगल में खड़ी थी—"तुम दोनों की इस जरा-सी गलती ने दोनों खान-दानों के नाम पर धब्बा लगा दिया है...."

"आप भी ऐसा ही समझते है, चाचाजी? मगर मैं सच कहता हूँ कि इन अफवाहों में सत्यता नाममात्र को भी नहीं है।"

"हो सकता है कि तुम्हारा कहना ठीक हो, मगर दुनिया को समझाया जाय। जो बात इतने जोरों से इस तरह एक -एक फैल गई उसका जल्द ही वारा-न्यारा नहीं हो सकता,

जयन्त बेटा !— मुझे अफसोस है—" मिर्जासाहब के चेहरे पर अशीम गम्भीरता नर्तन कर रही थी—"अफसोस है इस बात का कि तुम दोनों ने जरा भी समझ से काम नहीं लिया। तुम दोनों का रिश्ता अटूट नहीं हो सकता, मेरे बच्चों !...."

"मगर चाचा !"

"इधर देखो। यह दाढ़ी धूप से सफेद नहीं हुई है, बेटे ! मेरी बुजुर्ग आँखों में चेहरा देखकर दिल परखने की ताकत है। मैं समझ गया हूँ जो कुछ भी तुम दोनों के दिल में है, मगर मैं इसके लिए तुम पर नाराज नहीं हूँ। ऐसे वक्त में, ऐसी गलतियाँ हो ही जाती है। तुम मेरे दोस्त के बेटे हो - शमीम मेरी बच्ची है— फिर तुम दोनों पर नाराज होने का सवाल ही नहीं उठता ? कौन अपने जिगर के टुकड़ों पर नाराज होता है ? मुझे तरस आती है तुम दोनों पर, मगर करूँ क्या ? इन मजहम के दीवाने हिन्दू और मुसलमानों से खुदा भी पनाह माँगता है। बेटा ! ये यह समझने की कोशिश ही नहीं करते कि दोनों इसी भारत माँ की गोद में पैदा हुए हैं, यही की मिट्टी में पले और यही की मिट्टी में दफन होना है। फिर आपस में यह झगड़ा क्यों ?....यह फिरकापरस्ती क्यों ?"

"जब आप इतनी बात समझते हैं तो अफसोस किस बात का ?"

"बेटा जयन्त ! अभी तू नादान है। मैं क्या, कोई भी अकेला रहकर नहीं जी सकता। समाज का सहारा भी कोई चीज है। वह जब राजी नहीं तो मैं अकेला क्या कर सकता हूँ ?... कई लोगों के पत्र आ चुके हैं तुम लोगों की मुलाकात बन्द कर देने के लिए !"

"लेकिन यह केवल एक ही आदमी की शरारत है, जमाल चाचा ! उसी शिराज की !" —जयन्त ने कहा ।

"चाहे जिसकी यह शरारत हो, मगर बदनामी का धब्बा तो लग चुका, अब यह छूटने का नहीं....बल्कि दिन-पर-दिन गाढ़ा होता जायगा और अगर तुम दोनों ने अपना मिलना-जुलना कुछ दिनों तक और जारी रखा तो शायद इसका नतीजा इससे भी बुरा हो सकता है। यह बात जिस तेजी के साथ उड़ी है उससे यह मुमकिन नहीं कि तुम्हारे पिता के कानों तक यह बात न पहुँची हो। जरूर उन्हें खबर हो गई होगी और मुझे डर है, कहीं गुस्से में आकर वे तुम्हें डाटें-फटकारे न—साथ ही मेरी लानत-मलामत न करें !"

शमीम की आँखों में आँसू आ गये और वह तेजी के साथ अपने ड्राइङ्ग रूम में चली गई। मिर्जासाहब पुनः बोले—"दुनियां का खयाल करके चलना हमारा फर्ज है, बेटा ! तुम दोनों के हक में यही अच्छा होगा तुम दोनों आज तक की सारी बातें भूल जाओ और फिर कभी एक दूसरे से मिलने की कोशित न करो।" मिर्जासाहब ने अपना मुंह घुमा लिया, शायद उनकी आंखों में भी आंसू आ गये थे, उन दो अभागे प्राणियों की प्रणय-हत्या देकखर।

"ऐसा ही होगा..." जयन्त घूम पड़ा। दरवाजे की ओर बढ़ चला वह। इप समय उसके हृदय पर जो बीत रही थी, यह वही जानता था वह बिक्षिप्त-सा हो गया था। भयानक मान-सिक - यन्त्रण से उसका मर उड़ा जा रहा था।

शमीम अपने कमरे के दरवाजे पर खड़ी थी। उसे जाते देख-कर उसने पुकारा—"जरा यहाँ आना !" मगर जयन्त ने सुना

ही नहीं। वह लम्बे-लम्बे पैर बढ़ाता हुआ मकान के बाहर निकल गया। आकर मोटर में बैठ गया वह, और एक बार अपने चारों ओर दृष्टि डाली। उसे लगा जैसे यावत् जगत् अपने विभीषिकापूर्ण विकराल नेत्रों से घूर रहा है। उसे अनुभव हुआ जैसे समस्त सृष्टि में कोलाहल पूर्ण हाहाकारमयी ध्वनि गूंज रही है-समाजद्रोही! धर्मद्रोही! जगतद्रोही!...भय से वह एक बार कांप उठा। मोटर उसके घर की ओर दौड़ चली।

जयन्त के चले जाने पर मिर्जा जमालुद्दीन कुछ देर तक गम्भीर भाव से खड़े-खड़े न जाने क्या सोचते रहे! तत्पश्चात् आराम-कुर्सी पर बैठकर इन दोनों अभागे प्राणियों के भविष्य की चिन्ता करने लगे, जिन्होंने बिना सोचे-समझे एक दूसरे पर अपना अमूल्य हृदय न्यौछावर कर दिया था। ऐसा करते समय इन दोनों नादान प्राणियों ने दुनिया पर, धर्म पर और समाज पर जरा भी गौर नहीं किया था। प्रेम में आदान प्रदान की मादकता में वे आत्म-विस्मृत से हो उठे थे। उन्होंने थोड़ी देर के लिए भी यह ख्याल न किया था कि उनकी इन नादानी पर अधम दुनिया वाले, समाज के छुद्र जीव कितना तूफान मचा सकते हैं, कितनी आफत बरपा सकते हैं?

मिर्जा साहब बड़े ही रहमदिल थे। सच्चे मुसलमान थे। वे भली प्रकार जानते थे कि जवानी के दिन आंधी के दिन होते हैं, बरसात की तरह उनमें बाढ़ आती है। उनके हृदय में व्यथा थी-शमीम के लिए। उनके दिल में दर्द था-जयन्त के लिए, दुनिया के लिए। यह धर्म यह मजहब ही तो न जाने कितने निरीह प्रेमियों का प्राण लेता है। झूठी धर्मान्धता के कारण ही कितने अधखिले

फूल प्रेम-पास में आबद्ध होकर बिना विकसित हुए ही मुरझा जाते हैं। अर्थ-लोलुप, पिशाचतुल्य समाज हत्याकारी है। न जाने कितनी भ्रूण हत्यायें इस पापिष्ट समाज के कारण होती हैं !

मगर समाज किन लोगों का है ? हमारा ही तो ? हमीं तो समाज की ओट में भयानक दुष्कर्म करते हैं ? हमीं तो दूसरों को शिक्षा देते हुए स्वयं उसी मार्ग का अवलम्बन करते हैं ? फिर इसमें दोष किसका ?—हमारा ! जी हाँ, हमारा ही दोष है। हमीं तो दुनियाँ हैं, हमीं तो धर्म और मजहब हैं ? धिक्कार है हमारी समाज-प्रियता को हमारी दुनियादारी को, हमारी धर्मान्धता को !

शमीम के कमरे से सिसकने की आवाज आई। मिर्जासाहब व्याकुल हो उठे। उठकर शमीम के कमरे की ओर बढ़े। जाकर देखा—मेज की कोर पर सर रखे हुए शमीम सिसक रही है। उन्होंने पीछे से जाकर उसके सर पर मुलायमियत से हाथ फेरा। शमीम ने चौंक कर पीछे देखा और अपनी आँखें पोंछ ली— "अब्बा ! तुम यहाँ ? जाओ तुम अब्बा !" उसने कहा। उसकी आवाज में कम्पन था।

"बेटी शमीम !...." मिर्जासाहब बोले—"मत रो ! न रो बेटी ! अपनी नादानी पर कोई रोता नहीं है ? अब पलकों पर अश्क लाने से फायदा ही क्या होगा ? सिवा इसके कि इस बुढ़ापे से मुझे तकलीफ दे, रुलाये ! जाने दे बेटी ! समझ ले ख्वाब था यह...."

"नहीं अब्बा !...." दौड़कर शमीम लिपट गई मिर्जा साहब से—"ऐसा न कहो मेरे अच्छे अब्बा ! खुदा करे, यह सच हो...."

"दुनिया, का मजहब का ख्याल कर तुम्हें इस दास्तान को भूल ही जाना होगा, शमीम ! दुनिया के खौफनाक शिकंजों में

जकड़े हुए बेकस इन्सान हैं हम—हमारा कुछ भी अख्तियार नहीं, हमारा कुछ भी अपना नहीं। अगर हमें आराम के साथ जिन्दगी बसर करनी है तो इस दुनिया को समझना ही पड़ेगा, दुनिया की बात माननी ही होगी। मैं पहले ही तुम दोनों की बात समझ गया था, कुछ किया नहीं यह मेरी गलती है, मगर...."

"जाओ अब्बा! चले जाओ इस वक्त! तुम्हारी बातें मेरे जिगर में जख्म पैदा कर रही हैं। क्यों ये दुनिया वाले किसी के आराम की परवाह नहीं करते? क्या बनता बिगड़ता है उनका? ....उफ्!"—शमीम जोरों से रो पड़ी और जमाल मियाँ उल्टे पाँव लौट आये। समझते थे कि ऐसे बेवक्त कुछ कहना शमीम को दुःख पहुँचाना होगा।

* * * *

जिस समय जयन्त मोटर से उतरकर अपने कमरे की ओर बढ़ा उस समय उसका चेहरा पीला पढ़ गया था, मानों वह महीनों का बीमार हो। उसके अवयव शिथिल एव निश्चल थे, मगर भंगिमा उद्दीप्त थी।

"जयन्त...." उसके पिता की कर्कश आवाज उसके कानों में पड़ी। वह ठिठक गया। धीमी गति से वह अपने पिता के कमरे में आया और उसने देखा कि उसके पिता कमरे में विह्वलता से चारो ओर पैर पटक-पटक कर घूम रहे हैं। उनका चेहरा क्रोध से तमतमाया हुआ है, हाथ की मुठ्ठियाँ कसी हैं—सब कुछ देखा उसने, कारण भी कुछ समझ गया, मगर वह स्थिर रहा, कुछ बोला नहीं!

"जयन्त...." उसे देखकर क्रोधित सेठ केशवराव उसके पास बढ़ आये—"यह सब क्या हो रहा है? मैं पूछता हूँ क्या

हो रहा है यह सब । कैसे हो गई इतनी बातें ?....''

''....''जयन्त चुपचाप स्थिर भाव से खड़ा रहा !

''मुँह से बोल कुलाङ्गार ! यह सब क्या हुआ, क्या हो रहा है, क्या होगा ?....बोल ! मेरा सर नीचा कैसे हुआ, मेरे मुँह पर कलंक-कालिमा कैसे लगी, हमारे उज्ज्वल कुल पर यह काला धब्बा कैसे आ पड़ा ?''

''बात क्या है, पिताजी ?''

''बात क्या है ?....''गरज पड़े सेठजी—''तू जानता नहीं कि बात क्या है ? आग लगाकर, तूफान की सृष्टि कर, अब पूछता है बात क्या है ? पढ़-लिख कर तूफान बन गया है तू ? और उस तूफान में अपना धर्म, अपनी जात, अपना समाज, सबको उड़ा ले जाने की हिम्मत कर बैठा है ?''

''.......''जयन्त चुप रहा ! अपने पिता से उत्तर-प्रत्युत्तर करने का उसमें साहस नहीं था। वह तो उनका उग्र रूप ही देख कर भय-विह्वल हो गया था और आज वह समझ रहा था कि समाज के कुटुम्ब के प्रतिकूल चलना उसके लिये असम्भव है—एकदम असम्भव !

सेठजी का गुस्सा भभकता रहा—

''जमाल ने तुझे बहकाया, जमाल ने तुझे बिगाड़ा, जमाल ने तुझे नष्ट कर दिया। मैं कहता हूँ जमाल ही ने मुझे नीचा दिखाया है। जमाल ने ही मेरा सर नीचा किया है। देख, इस लहर की ओर देख, समाज पर दृष्टि डाल—क्या क्या अफवाहें फैल रही हैं? तू विधर्मी हो गया, तू धर्मभ्रष्ट हो गया, तू अपवित्र हो गया—और कीचड़ उछाला जा रहा हैं मुझ पर, क्योंकि तेरा पिता हूँ, तेरा जन्मदाता हूँ मैं ! जिस बात की मैं दूसरों को शिक्षा देता था, जिसके लिए मैं दूसरों का विरोध करता था—वही आज तूने कर

दिखाया, आस्तीन के साँप? सुन? पिता तेरे भले का साथी बुरे का नहीं। अगर तूने फिर उससे मिलने का प्रयत्न किया तो मैं तुझे दूध की मक्खी की तरह निकाल फेकूँगा—समझा!..." और झटके के साथ उसके पिता बाहर चले गये! वह हताश-सा कुर्सी पर बैठ गया, बिलकुल अचेतन अवस्था में।

६

कितने ही सुनहरे दिन आये और चले गये। अन्धकार बिखेरती हुई कितनी रातें आईं और चली गयीं। बरसात के रिमझिम बरसाते हुये बादल शिशिर की मधुमयी ओस में हो गये। सूखी हवा के साथ धूल-मिलकर रजकण शरीर का स्पर्श करने लगे। कितने ही परिवर्तन हो गये इन थोड़े से दिनों में, मगर उन दोनों स्नेहसिक्त प्रणियों के हृदय में जरा भी परिवर्तन न हुआ, न हुआ।

यद्यपि सामाजिक बन्धन से, धार्मिक झगड़ों से, दोनों के सम्मिलन में एक महान बाधा आ उपस्थित हुई थी और इसी कारण आज इतने दिनों से उन दोनों में से कोई भी एक दूसरे से मिल न सका था, परन्तु इतना होने पर भी उनके हृदयों में धधकती हुई असहनीय प्रेमज्वालयें एवं भयानक विरहाग्नि शान्त न हो सकी थी। धू-धूकर जल रही थी दोनों के अन्तस्थल में एक दूसरे से मिलने की अभिलाषाग्नि। मगर वे दोनों असहाय प्राणी लापरवाह थे। समाज ने, धर्म ने, दुनिया के अन्धविश्वासी लोगों ने उन दोनों को मिलने को, प्रेमदान करने की, घुल-मिलकर

उसने तो आज्ञा नहीं दी—क्योंकि वे भिन्न धर्मावलम्बी थे।

जयन्त के हृदय में प्रेम की, विरह की, दारुण ज्वाला धधक रही थी। मगर समाज के विरुद्ध जाने का, अपने पिता की अवहेलना करने का उसमें साहस नहीं था। जिस समय अपने पिता की उग्र मूर्ति देखता तो वह भय से सिहर उठता। उसके पिता की रक्ताक्त आँखों में किसी को भी अपनी ओर आकर्षित कर लेने की क्षमता थी—ऐसी क्षमता की उनकी अवहेलना करना असम्भब था, सर्वथा असम्भव !

यही कारण था कि जयन्त अपने पिता का चाहकर भी विरोध नहीं कर पाता था। वह अभी युवक था, नादान था। दुनिया को समझने की शक्ति उसमें नहीं थी। समाज के विरुद्ध जाने का साहस उसमें नहीं था। वह एक निरीह प्राणी था। अनाजाने में ही उसने एक नादानी कर डाली थी। यही तो उसका अपराध था, वह भी अक्षम्य ! वह बहुत चाहता कि शमीम को अपने स्मृति से हटा दे—हमेशा के लिए, मगर क्या यह सम्भव था ? उफ ! कैसे दूर कर सकता था वह उस मंजुल मूर्ति को अपने हृदय-मन्दिर से ? जिस निरीह पंछी ने, जिस सौन्दर्यमयी नारी ने, अकथनीय परिश्रम से उसके हृदय में अपना घर बनाया था, अपना बसेरा डाला था—उस नारी को, उस निरीह पंछी को वह कैसे ठुकरा सकता था, कैसे वह उसका बसेरा नष्ट कर सकता था ?

शमीम का चिन्तन करते-करते उसके दिन कटते—शमीम की विरह वेदना से व्याकुल उसकी रातें छटपटाते, करवट बदलते

व्यतीत होती। स्वच्छ चाँदनी में दूध-सी धोई रात्रि में कुर्सी पर बैठा हुआ धवल चन्द्र को निहारा करता। चन्द्रमा की उज्जवल मुखराशि में चन्द-मरीचिकाओं के साथ उसे शमीम का सौम्य मुखमण्डल मुस्कराता हुआ दृष्टिगोचर होता। वह विह्वल हो उठता। वह चिल्ला उठाता 'शमीम' ....!' निर्जन रात्रि की नीरवता को बेधता हुआ दूर क्षितिज के पास एक तीव्र स्वर प्रतिध्वनित हो उठता—"शमीम!" कभी-कभी पास के वृक्ष पर बैठा हुआ पीपासातुर पपीहा करुण स्वर में चीत्कार उठता—'पी कहाँ?'—और जयन्त के हृदय में तीव्र स्पन्दन होने लगता। दोनों हाथों से अपनी आँखें मूँद लेता वह। दिन में तो वह अपने पिता के कार्यों से छुट्टी ही न पाता—कभी खरीदने का कण्ट्राक्ट करता तो कभी बेचने का—इन्हीं सब कार्यों में वह संलग्न रहता, मगर रात होते ही उसका हृदय तड़प-तड़प उठता। उसकी वेदना असह्य हो उठती। असहनीय वेदना से आक्रान्त वह रात रात काट देता।

शमीम!....उसको न पूछिये। वह अबला। उसके कोमल कलेजे पर जो प्रणय-चिह्न अंकित हो गया था, उसका मिटना असम्भव था। संसार की विघ्न-बाधायें उसके प्रेम संसार को नष्ट नहीं कर सकती थीं, उसके पास औरत का दिल था—कोमल! सुकुमार! मगर उसके कोमल कलेजे पर ही तो समाज ने अपना नग्न नृत्य प्रारम्भ किया था, उसके सुकुमार हृदय के साथ ही तो दुनिया वाले वीभत्स परिहास कर रहे थे। वह दिन में आँसू बहाती, रात में रोती, मगर उसका जी हलका न होता! खाना उसे न सुहाता, पानी उसे अच्छा न लगता। उसके अब्बा परेशान थे। उसकी सोचनीय अवस्था देखकर उन्हें महान् कष्ट होता था, मगर करते क्या? अगर उनका बस

। तो वे अपने धर्म पर, अपनी जमात पर लात मारकर मीम का हाथ जयन्त के हाथ में दे देते, परन्तु यह असम्भव । कैसे समझा सकते थे धर्मान्धता के पुजारी सेठ केशवराव ? कैसे दूर कर सकते थे वे उनके हृदय में बसी हुई मुसलमानों के प्रति असीम घृणा को ? सेठ केशवराव उनके दोस्त थे, मगर मजहब के दोस्त नहीं थे !

* * * *

चारु-चन्द्रिका में थियोसाफिकल पार्क के एक स्वच्छ जलपूरित वली के किनारे, पत्थर की एक बेन्च पर बैठी हुई ध्यानमग्न वास्तव में अप्सरा-सी लग रही थी। उस समय रात्रि के आठ बज गये थे। पार्क में इधर-उधर घूमते हुए दो-चार आदमियों को छोड़कर और कोई न था। मानसिक अशान्ति से ल होकर आज शमीम यहाँ घूमने चली आई थी। उसके श्वेत सुकोमल पैरों के पास ही बावली का उज्ज्वल जल चमचमा रहा था। चन्द्र मरीचिकायें उस निर्मल जलाशय में रजत रेखा-सी चमक रही थी, कल्लोल कर रही थीं। सर्दी कुछ-कुछ बढ़ने लगी थी।

"शमीम !" पीछे से आवाज आई। उसने चौंक कर उधर देखा। उसका जीवन-सर्वस्व, उसके हृदय-प्रदेश का स्वामी, उसकी बेचैनियों का सहारा, उसके स्वप्नों का देवता खड़ा है वहाँ— साक्षात् !

"जयन्त !........यहाँ तुम कैसे आ गये ?" आश्चर्य से उसने पूछा।

"यह न पूछो, शमीम !" जयन्त ने अपने स्वर की विकलता छिपाने का प्रयत्न किया—"आजकल दिल पर जो बीत

रही है, न पूछो। मस्तिष्क की अस्थिरता से घबाड़कर मैंने सोचा बाग में चल कर थोड़ा जी बहला लूँ। क्या जानता था कि यहाँ आकर अपनी अराध्य देवी का दर्शन पा जाऊँगा। सच कहता हूँ, शमीम ! इतने दिनों पर तुम्हें देख कर हृदय में निरन्तर होने वाली, पीड़ा, अब कम मालूम पड़ रही है। काश ! मैं समाज के भयानक शिकंजों को तोड़ सकता।"

"तुमने मुझसे छल किया, मेरे सनम ! मुझे बरबाद कर दिया तुमने ! यह न सोचा कि औरतों का दिल इतना मुलायम होता है कि जरा-से धक्के से टूट जा सकता है..."

"ऐसा न कहो, शमीम ! मेरे हृदय पर चोट न पहुँचाओ। देखो, इधर देखो मेरी ओर ! तुम्हारी भोली सूरत अब भी मेरी इन शुष्क आँखों की पुतलियों से झाँक रही है। देखो—मेरे सीने पर हाथ रखकर देखो, मेरी आत्मा तुम्हारी आत्मा से मिलने के लिए कितनी अधीर हो रही है..."

"तुम सिर्फ बातों से मुझे तसल्ली दे रहे हो—तुम्हारी बातें "मर्दों" की बातें हैं—एकदम झूठी। तुम मुझे चाहते हो, तुम्हें मुझसे मुहब्बत है—तो क्या मेरी बरबादी पर तुम्हारी पलकों में अश्क न छलक आते ? मेरी बदतर हालत देखकर तुम्हारे दिल में दर्द पैदा न होता ? तुम जालिम हो, बेरहम हो, सितमगर हो—आह ! तुम क्या-क्या नहीं हो ?" शमीम विह्वलता से जयन्त के सीने पर लुढ़क पड़ी। जयन्त के काँपते हाथों ने उसे सम्हाल लिया।

"शमीम !...." मैं स्वयं अपने से युद्ध कर रहा हूँ। पिता की आज्ञाकारिता, समाज की व्यावहारिकता, धर्म का बन्धन और इन सबसे ऊपर तुम्हारा प्रेम—किसे प्रश्रय दूँ, किसे नहीं ! मैं

आपके हृदय में साहस का संचार करना चाहता हूँ, मगर अपने आपको ऐसा करने में सर्वथा असमर्थ पाता हूँ, फिर भी मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ, शमीम ! कि मेरे हृदय से तुम कभी न जा सकोगी, मेरे मानस-मन्दिर में सदैव तुम्हारी मधुर मूर्ति का बसेरा रहेगा और देख लेना एक दिन या तो दुनिया को अपने ऊपर सदय बनाकर तुम्हें प्राप्त करूँगा, या सारे समाज पर लात मारकर तुमसे आ मिलूँगा।"

"काश ! तुम ऐसा कर सकते....ऐसा कर सकते तो सीना ऊँचा कर दुनिया को दिखा देते कि हिन्दू-मुसलमान एक हैं—दूध पानी की तरह !"—शमीम ने कहा।

"हम लोग एक हैं मगर कौन समझाये इन अन्ध बिश्वासियों को...."

"हिन्दू-मुसलमान एक बाप के दो बेटे, एक जिगर के दो टुकड़े, एक चेहरे के दो दीद हैं—दोनों में फर्क क्यों ? दोनों में मुखालफत क्यों ? यह सब मजहबपरस्तों का जुनून है...." शमीम एक क्षण के लिए रुकी, फिर धवल चन्द्र के खिलखिलाते हुए मुख-मण्डल पर दृष्टिपात करती हुई बोली—काफी देर हो गई है, बाबूजी नाराज होंगे—तुम जाओ अब !"

"होने दो....इतने दिनों के बाद पाकर भी, कैसे छोड़ दूँ तुम्हें शमीम !...."जयन्त का स्वर विवसतापूर्ण था—"दिल कहता है तुम्हें लेकर वहाँ उड़ चलूँ जहाँ चाँद चमकता है, तारे निवास करते हैं, मोतियों की लड़ी शबनम बनकर बरसती हैं—वहाँ जहाँ दुःख नहीं, सन्ताप नहीं, धर्म नहीं, दुनियादारी नहीं ! चलोगी वहाँ शमीम ?...."

"कहाँ ?...."—और शमीम की दृष्टि एकाएक जयन्त के

मुख पर जा पड़ी। उसने देखा, उसका चेहरा गम्भीर है। मगर आवेग से पीला पड़ा हुआ —"कहाँ ले चलोगे सनम ?"

"वहाँ—चाँद तारों की दुनियाँ में ! हमलोग चमकते हुए चाँद में अपना मुखड़ा देखेंगे, तारिकाओं से अठखेलियाँ करेंगे, इन्द्रधनुष की सतरंगी गोलाई पर सवार होकर विश्व-विचरण करेगें .."

"तुम्हारा मतलब मै नहीं समझी ? तुम क्या कहना हो ? ...."

"यह कि ..." जयन्त ने जेब से एक पुड़िया निकाली—" पुड़िया का बिष हम तुम अपनी जीभ पर रख कर, चिन्ताओं से छुटकारा पा जायँगें। समाज के अत्याचार से कितनों ने इसी मार्ग का अवलम्बन किया है – हम लोग भी करेंगे...."

"सितमगर !...." शमीम रो पड़ी—"लाओ दो, तुम्हें दिया है तो जान भी दे सकती हूँ...."

"क्या यह अपनी मुहब्बत का सबूत दे रहे हो, जयन्त ?—" शिराज का व्यंगात्मक तीव्र स्वर गूंज उठा—' है, लानत है ! इतने बुजदिल हो तुम ? अपने प्रेस्टिज का भी ख्याल नहीं ? अपने शाथ मिस शमीम को भी बरबाद कर का इरादा है तुम्हारा ? दोस्त ! खुदकशी बुजदिली है और इतनी आसान चीज नहीं जितना तुम समझते हो..."

जयन्त क्रोध तथा आशंका से काँप उठा—उफ ! यह उसके पीछे-पीछे घूमता रहता है, उसके हर काम की खबर है—"तुम क्यों हम लोगों के पीछे पड़े हो ?...." वह क्रोध काँपते स्वर में बोला।

"तुम्हें बरबाद होने से बचाने के लिए...." शिराज आगे बढ़ आया। लपक उर उसने जयन्त के हाथों से वह पुड़िया छीन ली और दूसरे ही क्षण वह उसकी जेब में जा रही – "खबरदार ! फिर ऐसा इरादा न करना, नहीं तो सर तोड़ दूंगा। तुम बरबाद हो जाओ मगर अपने साथ एक बेकसूर को बरबाद करना कहाँ की अकलमन्दी है...." शिराज ने कन्धे हिलाये। जयन्त उसकी ओर झपटा, मगर शमीम ने उसका हाथ पकड़ लिया। वह नहीं चाहती थी कि वे दोनों आपस में गुथ जायँ और बात तूल पकड़ ले। शिराज कहता रहा—"मुझे अफसोस है कि मैं आप लोगों की बातचीत में आ गया...." उसका इशारा शमीम की ओर था—"मगर मिस्टर जयन्त ! तुम्हारे वालिद सेठ केशवराव को इस बात की खबर हो गई है और मुझे डर है कि शायद वे तुम पर शख्ती से पेश आये....खुदा हाफिज !" वह घूम पड़ा और दृष्टि से ओझल हो गया।

"यही शैतान पिताजी को खबर देता है...." जयन्त ने दाँत पीसा—"हमेशा हमलोगों के पीछे घूमता रहता हैं, न जाने क्या चाहता है यह ?...."

"जाने दो !..." शमीम बोली—"मैं तुमसे मिन्नता करती हूँ कि खुदकशी करने का ध्यान छोड़ दो, यह बुजदिली है। हम दोनों रहेंगे, दुनियां से लड़ेगें...."

"ऐसा ही होगा...." जयन्त ने कहा—"अब चलना चाहिए, काफी देर हो गई हैं ?"

"क्या कहते हैं पिताजी ! यह क्या कहते हैं आप ?" जयन्त का स्वर काँप रहा था।

"ठीक कह रहा हूँ मैं ! तेरे सर पर जमाल का भूत चढ़ बैठा

है, उसने जादू कर दिया है तुझ पर !..." सेठ केशवराव हुँकार उठे—"तुने पढ़ा है पिता की आज्ञा की अवहेलना करना, तूने सीखा है विधर्मियों से प्रेम बढ़ाना। तूने जाना है समाज से बिद्रोह करना। तू भूल गया है अपने-आपको प्रेम के पागल पन में।"

"पागलपन नहीं पिताजी ! जीवन-मृत्यु का प्रश्न है !"
"जीवन-मृत्यु का प्रश्न ? शर्म नहीं आती तुझे अपने पिता से ऐसी बात करते हुँए ? धर्म को लात मार कर, समाज के सुख पर कलंक-कालिमा पोतकर, दुनिया की अवहेलना कर, तू सुख की नींद सोना चाहता है नादान लड़के !···यह असम्भव है ! चन्द्रमा का प्रकाश शीतल होता है, मगर युवाअवस्था का रक्त उष्ण होता है। तू उसी यौबन के उमंग में अपने कुल पर काला धब्बा लगा रहा है। अन्धकारमय भविष्य की ओर तेरा तनिक भी ध्यान नही है। सोच रहा हूँ कि तेरी यह भूल, तेरा यह अपराध, तेरा यह पागल-पन, जिसे तू आज इतना छोटा समझ रहा है, एक दिन ऐसा उग्र रूप धारण करेगा कि बाप बेटे से, रक्त-रक्त से अलग हो जाने के लिए बाध्य हो जायगा। समाज के लिए मैं तेरी बलि दे सकता हूँ। जिसने समाज की अवहेलना की, जिसने दुनिया को न समझा वह मेरा बेटा नहीं और न मैं उसका बाप !..." सेठ केशवराव क्षणभर के लिए रुके—ध्यानपूर्वक एक बार उन्होंने जयन्त के मुख पर दृष्टिपात किया, पुनः बोले...."मैं समाज का आधार-स्तम्भ हूँ। आज सारा समाज मेरे संकेत मात्र पर नाचने को प्रस्तुत है। समाज का अधिनायक बनकर मैं अपने भाइयों को उपदेश देता हूँ—फिर मैं कैसे सहन कर सकता हूँ कि मेरा ही बेटा मेरे बनाये नियमों का उल्लंघन करे। मेरे ही हृदय का टुकड़ा मुझे सारी दुनिया के बीच अपमानित करे ?"

"...." जयन्त चुप रहा। उसके पैर काँप रहे थे। उसके [?] का क्रोधपूर्ण स्वर कानों में गूँज रहा था।

"जयन्त !" एकाएक सेठ केशवराव कुछ नम्र पड़े—"अपने को सम्हालो तुम ! इस बार क्षमा कर दिया, मगर अब ऐसा न हो...."

*

१०

रात्रि की भयानक नीरवता यावत् जगत् को आच्छादित किये थी। व्योम मार्ग पर प्रदीप्त नन्हीं-नन्हीं तारिकायें घने अंधेरे में विस्फारित नेत्रों से मानव जगत् की अकृतिम सुन्दरता को देखने का व्यर्थ प्रयास कर रही थीं। हवा निश्चल थी एवं प्रकृति निस्तब्ध ! सारा संसार प्रगाढ़ निद्रा में निमग्न था।

शमीम के कमरे में टँगी दीवाल घड़ी टिक-टिक करती हुई अविराम गति से चल रही थी। विश्राम की उसे आकांक्षा नहीं थी। उसकी लम्बी-लम्बी सूइयाँ नन्हें-नन्हें खानों को पार करती हुई, जीवन के अमूल्य क्षणों को क्षीण बना रही थी। कमरे में तीव्र प्रकाश हो रहा था। मेज के पास बैठकर एक कागज पर कुछ लिखती हुई शमीम की मुखश्री उस प्रकाश में और भी देदीप्यमान हो उठी थी। लिखने में शमीम इतनी तन्मय हो उठी थी कि उसे वाह्य-जगत की जरा भी सुध न थी। वह अपनी सारी मानसिक शक्तियों को एकत्रित कर अपने प्रियतम को पत्र लिख रही थी—यों !

सनम,

अब सहा नहीं जाता तुम्हारी जुदाई का सदमा ! दिल में आग,सी लगी है, ऐसी कि बदन का रेशा-रेशा जलाये दे रही है।

जिगर में भयानक तूफान उठ खड़ा हुआ है, उस तूफान में पड़कर मैं इस दुनिया से कहीं दूर उड़ी जा रही हूँ और तुमसे कह रही हूँ बचा लो मुझे !....सोचो तो जरा, एक औरत इतनी तकलीफों का सामना कैसे कर सकती है ? तुम मर्द हो मगर तुम भी घबड़ा गये हो, ऐसी हालत में मेरी क्या गिनती ?

मुझे उबार लो। जहाँ कहो, वहाँ चलने को तैयार हूँ। कहीं दूर चलकर हम अपनी दुनिया बसा लेगें। दुनिया वालों की नजरों से दूर निकल चलें हम तुम !....

पत्र समाप्त कर वह उठ खड़ी हुई। उसने अपना कोमल शरीर तोड़कर, रात में देर तक जागते रहने की थकावट दूर की आगे बढ़कर खिड़की बन्द कर ली और स्वीच दबा कर रोशनी बुझा दी। विस्तर पर आकर लेट गई। अनेक प्रकार के काष्टदायक विचार उसके मानसपट पर अंकित होने लगे और उन्हीं के साथ भयानक युद्ध करते-करते वह कब सो गई, उसे मालूम न हुआ।

दूसरे दिन करीब ग्यारह बजे उसका पत्र जयन्त के हाथ में था। उसने अपने विश्वासी नौकर द्वारा चुपके से जयन्त के पास भेज दिया था। जयन्त ने जब उसका पत्र पढ़ा उसे अत्यधिक मार्मिक वेदना हुई, शमीम के दर्द की कहानी पढ़कर। उसने अपना हृदय दृढ़ किया। विपत्तियों का सामना करने का संकल्प लिया और शमीम की पत्रोत्तर देने बैठ गया ! उसने लिखा—

तुम्हारा पत्र मिला ! मुझे अतीव दुःख हुआ, यह सोचकर कि मेरे ही कारण तुम्हें भी अपार कष्ट सहन करना पड़ रहा है, मगर मैंने ईन दुःखों का इन कष्टों का अन्त करने का निश्चय कर लिया है। मैंने सोच लिया है कि चाहे पिता अप्रसन्न हों,

समाज रुष्ट हो, दुनियाँ वाले अंगुली दिखाये, मगर मैं अब तुम्हें अपने से दूर नहीं रखूँगा। मेरी जान तुम्हारी है, तुम्हारे ही साथ इसका विलय होगा। बकने दो लोगों को शमीम! रूठने दो पिता जी को। भाड़ में जाने दो समाज को! आओ हम और तुम 'एक' होकर समाज के साथ भयानक युद्ध करें! मैंने हृदय में यह साहस का संचय कर लिया है, शक्ति इकट्ठी कर ली है—अब विघ्न-बाधायें मुझे डिगा नहीं सकतीं।

मैं निश्चयपूर्वक कहता हूँ कि अब हमारी दुनिया अलग बनेगी। रात्रि का अन्तिम प्रहर व्यतीत होने के साथ ही साथ जो गाड़ी स्टेशन पर पहुँचती है, उसी से कल बहुत दूर निकल जाने का इरादा है मेरा, तुम्हें भी साथ देना होगा। अगर मेरी सहचरी बनना चाहती हो तो सब सुखों को लात मारकर कल स्टेशन पर आ मिलना!! इन कलुषित हृदय वाले मनुष्यों से दूर जाकर हम अपना जीवन-यापन करेंगे, कष्ट सहेंगे, दुख सहेंगे हंस-हंस कर! कितना आनन्द आयेगा शमीम!

क्या करूँ? और कोई रास्ता नहीं है, जिससे हम तुम निष्कंटक मिल सकें। तुम जरूर आना, मेरी शमीम! मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगा स्टेशन पर।

जयन्त ने नौकर को पुकार कर वह पत्र मिर्जासाहब के घर दे आने के लिए कहा और उसे समझा दिया कि पत्र शमीम को छोड़ कर अन्य किसी के हाथों में न पड़े। नौकर पत्र लेकर चला गया जयन्त भागने की तैयारी करने लगा।

जी हाँ, वह भाग जाना चाहता था....भाग जाना चाहता था अपने पिता की अधिकार सीमा के बाहर, सामाजिक बन्धन से दूर, दुनियादारी से एकदम अलग। उसकी इच्छा थी शमीम को लेकर किसी दूर शहर में जा बसने की और कोई नौकरी करके अपना पेट पालने को।

पिता की चोरी-चोरी जयन्त ने सारी तैयारी कर ली और दूसरे दिन कुछ साधारण वस्त्रादि लेकर जब वह स्टेशन पहुँचा, उस समय रात्रि के अवसान में कुछ ही विलम्ब था और तारागण आकाश मार्ग पर अब तक टिमटिमा रहे थे। जयन्त प्लेटफार्म पर जाकर एक मामूली-सी बेञ्च पर बैठ गया। उसके पास अधिक सामान न था, केवल था एक सूटकेश और एक छोटा-सा कपड़े का बन्डल !—बस, यही था उसका संक्षिप्त सामान !

वह जानता था कि शमीम अवश्य आयेगी, इसलिए वह उद्विग्नता के साथ प्रतीक्षा करने लगा। रह रहकर वह 'क्रासब्रिज' की और देख लेता। उसे ऐसा मालूम होता, मानों शमीम अब आ ही रही है !

आधा घण्टा बीत गया, मगर शमीम नहीं आई। जयन्त कुछ घबड़ाने लगा। उसने घड़ी पर दृष्टि डाली। देखा, गाड़ी आने में केवल पन्द्रह मिनट देर है और शमीम अभी तक नहीं आई है। उसका कलेजा दहल गया। वह भाग सकने में असमर्थ हो गई क्या ? आखिर कारण क्या है उसके न आने का ? कहीं उसके अब्बा को तो पता नहीं चल गया ? उन्होंने उसे रोक तो नहीं लिया ? कहीं उसका मन अपने अब्बा को छोड़कर भाग चलने से डवाँडोल तो नहीं हो गया ?

जयन्त ने व्याकुलता के साथ पुल की ओर देखा। दूसरे ही क्षण हताश होकर अपनी आँखें मूँद लीं। पुल पर कोई न था। सूना था लौह-निर्मित वह विशाल पुल ! जयन्त ने अपना मस्तक पकड़ लिया। उफ ! शमीम अब तक आई नहीं ? क्यों नहीं आई वह ? क्या वह नहीं आयेगी ? आयेगी....अवश्य आयेगी। अपना सारा कार्य छोड़कर वह दौड़ी आयेगी। सारा जंजाल त्याग कर चली आयेगी इस निर्जन स्टेशन तक !

उस समय प्लेट फार्म पर अधिक यात्री नहीं थे केवल ५-६ सिकुड़े हुए बैठे थे। जयन्त इधर-उधर टहल रहा था। टन् टन—प्लेटफार्म पर लटकते लम्बे मोटे से लोहे पर दूसरी चोट। जयन्त का हृदय कांप उठा, साथ ही उसकी दृष्टि पुनः पुल जा पड़ी, मगर इस बार भी पुल सूना था।

तीसरी चोट पड़ी और दूर से आती हुई ट्रेन की लाईट की प्रखर 'लाइन' पर नृत्य करने लगी। जयन्त की नसों में तेजी से रक्त लगा—अब क्या होगा? शमीम तो अभी तक नहीं आई! एकाएक वह प्रसन्नता से उछल पड़ा। उसने देखा, निर्जन पुल से एक व्यक्ति तेजी के साथ प्लेटफार्म की ओर आ रहा है। व्यक्ति एक लम्बा ओभर कोट पहने हुए था और उठे हुए लम्बे रों से उसका मुँह ढका हुआ था, केवल आँखें खुली थीं। उसके पर एक मूल्यवान नाइट-कैप थी। अवश्य वह शमीम है। लोगों दृष्टि से बचने के लिए वह छद्मवेष में आ रही है, तभी तो पर नाइट-कैप है!—खूब! जयन्त तेजी के साथ पुल की ओर मन-ही-मन बड़बड़ाता हुआ—"आखिर आ ही गई शमीम...." जाकर शमीम के सामने खड़ा हो गया और गद्गद् वाणा बोला—"तु आ गई शमीम? आ गई तुम....मैं तो हताश हो था...."

उस ओभरकोटधारी व्यक्ति ने—शमीम ने—ओवरकोट का अपने मुँह पर से हटा लिया। उसी समय ट्रेन की तीव्र उनके मुख पर पड़ी। साथ ही भय से आक्रान्त जयन्त चीख। विस्फारित नेत्रों से उसने देखा—उसके सामने उसके पिता उग्र मूर्ति खड़ी है।

जी हाँ! उसके पिता ही थे वे—सेठ केशवराव!—मगर इस एकदम सौम्य—एकदम शान्त! जयन्त को देखकर वे बोले—

"जयन्त तू यहाँ कैसे ?" उनकी आवाज स्थिर थी।

जयन्त चुप रहा। वह हतबुद्धि-सा हो गया ! वह जानता था कि यद्यपि इस समय उसके पिता का स्वर स्थिर है, मगर अन्तराल उनका तीव्र वेग से क्रोधित हो रहा है—"कहीं बाहर जा रहा था क्या ? मुझसे पूछा तक नहीं। कितनी बड़ी भूल करता है तू ? कहीं जाने की आवश्यकता नहीं। उठाले अपना सामान। बाहर मोटर खड़ी है...."

सेठ केशवराव घूम पड़े। जयन्त ने काठ के पुतले की तरह अपना सामान उठाया और सेठ केशवराव के पीछे-पीछे चलने लगा। उस समय उसकी जो अवस्था थी, वह वर्णनातीत थी। वह सोच रहा था - अच्छा हुआ शमीम नहीं आई, नहीं तो पिता के सामने उसे भी अपमानित होना पड़ता।

जयन्त जानता था कि उसके पिता की यह सौम्य एवं शान्त मुद्रा घर पहुँचते ही विकराल रूप धारण कर लेगी और तब उस पर जो न बीतें !

उसी समय ट्रेन आकर प्लेटफार्म पर खड़ी हो गई।



११

सेठ केशवराव गरज उठे—"मैं पूछता हूँ, इतने सबेरे-सबेरे स्टेशन पर जाने की क्या आवश्यकता थी ?"

"कठोर अनुशासन से तबीयत ऊब गई थी मेरी !"

"ऊब गई थी !...." उन्होंने हुँकार भरी—"अपने पिता से अपने जन्मदाता से ऊब गया था तू ! जिसने तुझे अपना रक्त पिलाकर पाला, जिसने सुख-दुख के समक्ष अपने कष्टों को

न की उसी से तू ऊब गया था? वाह रे लड़के?...."
दो पग आगे बढ़ आये—"तू उब गया है, इसलिए कि तेरे विरुद्ध है। तू उब गया है, इसलिए कि शमीम को पा सका और भाग जाना चाहता था, निकल जाना चाहता शमीम के साथ। स्टेशन पर तू शमीम की राह देख रहा था, वह नहीं आई। आती कैसे, तेरी चिट्‌ठी उसके पास पहुँच न सकी। वह तो यह देख! मेरी जेब में पड़ी है...." सेठजी ने से एक कागज निकाल कर जयन्त के सामने फेंक दिया—रतुआ को यह चिट्‌ठी दी थी शमीम को दे आने के लिए। न सोचा कि आज बीस साल का पुराना नौकर मेरे साथ कैसे घात कर सकता है?"

"जयन्त को पैर तले की जमीन खिसकती-सी मालूम पड़ी। उसकी समझ में शमीम के न आने का कारण आया। अब जाना कि उसके पिता के विश्वासी नौकर ने यह चिट्‌ठी को देने के बदले, स्वयं उसके पिता को दे दी थी। कैसा का यह क्रूर चक्र है! कैसी विडम्बना है।

"पिताजी!...." उसका स्वर स्थिर था। आज उसने अपने को शारी परिस्थितियों का ज्ञान करा देने का दृढ़ निश्चय लिया था—"मैं साफ-साफ बता देना चाहता हूँ कि...."

"क्या साफ-साफ बता देना चाहता है...." गरज पड़े सेठजी "यही न! कि शमीम के बिना तू नहीं रह सकता, नहीं जी? बेहया, बेशर्म कहीं का! फिर ऐसी बात मुँह पर लाया जबान खींच लूँगा, चमड़ी-चमड़ी उधेड़ दूँगा। तू अपने को क्या है? तेरे पास अपना कहने के लिए है ही क्या! बाप धन पर न भूल! यह सारा ऐश्वर्य, वैभव— तेरा नहीं मेरा है। आज्ञा के विरुद्ध आचरण करने पर तू इस ऐश्वर्य का कभी नहीं कर सकता...."

"पिताजी !...."

"मैं कहता हूँ, अपने अर्जित धन को लुटा दूँगा, गरीबों बाँट दूँगा, सड़क पर फेंक दूँगा, मगर अपनी इच्छा के चलने वाले को एक पाई भी छूने नहीं दूँगा !...."

"मैं आप के धन का भूखा नहीं, पिताजी ! मैं धन को का मैल समझता हूँ ..."

"जयन्त !"

"आपका वैभव, आपका ऐश्वर्य, आपका धन, यह सब मुझे कुछ नहीं चाहिये...." जयन्त की भंगिमा वक्र हो गयी थी।

"जयन्त !"

"आपका समाज, आप की दुनिया, आपका धर्म रसातल जाय, मुझे परवाह नहीं...."

अपने जीवन में पहली ही बार जयन्त ने अपने पिता के इस साहस के साथ बातचीत की थी।

"जयन्त ..." चिल्ला पड़े सेठजी जोरों से। उसी समय चट्-चट्ट कई तमाचे जयन्त के गालों पर जा पड़े। जयन्त विक्षप्त-सा अपने कमरे में भाग आया और भीतर से किवाड़ बन्द कर चारपाई पर जा गिरा। उसके नेत्रों से अविरल अश्रु धारा प्रवाहित हो चली। लाड़-प्यार से पला हुआ वह युवक, पिता के इस प्रथम प्रहार को सहन नहीं कर सका। उसे महान ग्लानि हो रही थी। यदि आज उसकी माँ उसके पास होती, तो क्या उसके पिता उसके गालों पर ऐसा निष्ठुर प्रहार कर सकते थे ?

जयन्त सोचने लगा उसके पिता समझते हैं कि बिना उनके सहारे, उनका बेटा एक पग भी आगे न बढ़ सकेगा। बिना उनके ऐश्वर्य का, बिना उसके वैभव का, बिना उसके धन का उपयोग किये, उनका अनुभवहीन बेटा संसार क्षेत्र में सफलता नहीं

कर सकेगा....मगर वह उन्हें दिखा देगा कि संसार के ऐश्वर्य, एवं धनही सब कुछ नहीं, आत्म-शक्ति भी कोई वस्तु है। वह देगा कि बिना उनके धन के, बिना उनके समाज के, बिना धर्म की सहायता के, वह अपना जीवनयापन करेगा—सुख क ! साहस के साथ सारी दुनिया की अवहेलना करके शमीम अपनी बनायेगा, समाज की छाती पर दाल दलेगा !

अब असहनीय हो गया था उसके पिता का असह्य व्यवहार ! उसके हृदय पर प्रबल आघात हुआ था। लोग कहते हैं कि माता अपने बच्चों को अपना रक्त पिला-पिलाकर पालते हैं, मगर ! आज जयन्त को मालूम हुआ कि समय पड़ने पर वे ही -पिता अपने बच्चों का रक्त भी पी सकते हैं, उनका बना संसार उजाड़ सकते हैं, उनका हरा भरा संसार नष्ट कर हैं—ऐसे होते हैं ये माता पिता ! प्रबल पिचासरूपी समाज भयानक शिकंजों में जकड़े हुए असहाय प्राणी।

जयन्त रोता रहा दिन भर। उसकी आँखें न सूखीं। एक भी उसने मुँह में नहीं रखा। एक घूँट पानी भी उसने नहीं। वह रोता रहा और सोचता रहा—समाज के आगे उसके अपने बेटे को भी तुच्छ समझते हैं ! कैसी अवहेलना है, कैसा न है, कैसा अनाचार है यह !

नहीं ! अब वह नहीं रह सकता इस घर में। अब वह नहीं सकता इस घर के पिंजड़े में। वह जायेगा—भाग जायगा। ! बहुत दूर ! वहाँ, जहाँ सूरज का गोला पृथ्वी के उपर आता। वहाँ, जहाँ बादल के टुकड़े गर्जन करते हुए पृथ्वी का सम्पर्क हैं। वहाँ, जहाँ पर यह शस्यश्यामला भूमि, शून्यकार आकाश का चुम्बन करती हैं वहीं, क्षितिज के उस पार !

न जाने कैसे-कैसे विचार उसके मानस, पट पर अंकित हो रहे

थे। दिन का अन्त आ पहुँचा। मगर उसकी विचार धारा न थकी। सन्ध्या के छः बजते ही वह उठा। खूँटी पर से कमीज उतार कर गले में डाली। अपना मनोवेग जिसमें मुश्किल से दस-पद्रह रहे होंगे, जेब में रक्खा। तत्पश्चात पैदल ही शहर की ओर चल पड़ा। उसके पिता उस समय कहीं बाहर चले गये थे।

मिर्जा जमालुद्दीन अपने कमरे में बैठे हुए न जाने क्या लिख रहे थे। उनके सामने मेज पर बहुत से कागजाद इधर-उधर फैले हुए थे। कोई कठिन समस्या उपस्थित थी उनके सामने और उसी को सुलझाने में ब्यस्त थे। इतने ब्यस्त की आस पास की खबर ही नहीं थी उन्हें।

"जमाल चाचा !" दरवाजे पर से आवाज आइ। मिर्जा साहब ने सर उठाकर देखा तो जयन्त को सामने खड़ा पाया— साधारण वस्त्र, अन्यमनस्क मुखाकृति, गम्भीर भंगिमा लिए! आश्चर्य से मिर्जासाहब अवाक्-से हो रहे। उन्हें अपनी आँखों पर विश्वास ही न हुआ, स्वप्न में भी उन्होंने यह नहीं सोचा था कि जयन्त इस प्रकार दयनीय अवस्था में उनके पास आयेगा।

"बेटा !...."उन्होंने पुकारा।

"आपके पास आया हूँ, जमाल चाचा !"—जयन्त का चेहरा गम्भीर था।

"आओ न बेटा !...." जमाल चाचा बोले और जयन्त आकर उनके सामने कुर्सी पर बैठ गया।

"मुझे अपने कदमों में जगह दीजिये, चाचा ? मुझे रास्ता दिखाइये ?"

"तुम्हारा मतलब, तुम्हारा इरादा क्या है ?" आश्चर्य तथा आवेग से मिर्जासाहब कुर्सी छोड़कर उठ खड़े हुए !

"जमाल चाचा !...." जयन्त सूखी हँसी हँसा—"मेरे दिल

पर जो बीत रही है, उसे जानते हुये भी ऐसा पूछ रहे हैं आप। सुनिये, मैंने पिताजी के वैभव पर लात मारकर स्वयं कुछ कर दिखाने का व्रत लिया है और मैं चाहता हूँ आपके मार्ग-दर्शन! यदि आपने ठीक रास्ता नहीं दिखलाया तो मेरा भविष्य अंधकार-मय हो जायगा मैं शमीम को चाहता हूँ, चाचा।''

"मैं जानता हूँ बेटे!...." जमाल चाचा के चेहरे से गम्भीरता-मिश्रित आश्चर्य टपक रहा था 'मगर तुम्हारा इरादा खौफनाक है। मुहब्बत के लिए इतनी बड़ी कुर्बानी करना नादानी है, बेटा जयन्त!—जमाल ने जयन्त के कन्धे पर हाथ रख दिया।

जयन्त चुपचाप कुर्सी पर बैठा रहा!

"यह कुर्बानी नहीं है चाचा! यह दिल में लगी हुई भयानक आग हैं जो शोले उगल रही है समाज के मुँह पर...."

"तुम मेरे दोस्त के बेटे हो, जयन्त! ऐसा दोस्त, जिसे मैं जान से बढ़कर चाहता था और अब भी मेरे दिल में जिसके लिये वही पाक मुहब्बत है, तुम उस फरिस्ते जैसा बाप को छोड़ कर मेरा साथ देना चाहते हो? जरा सोचो तो बेटा! जिस वक्त तुम्हारे बाप को यह दास्तान मालूम होगा, उस वक्त उनके दिल पर क्या बीतेगी? उनके दिल में फौरन ही यह शक नहीं होगा कि मैंने ही तुम्हें बहकाया है? क्या उनका कलेजा नफरत से भर नहीं जायगा? क्या वे यह नहीं सोचेगे कि जमाल ने-उनके जिगरी दोस्त जमाल ने, उनके साथ मजहबी दुश्मनी की है? बेटा, मैं तुम्हें साफ-साफ बता देना चाहता हूँ कि तुम जिस रास्ते जाना चाहते हो, वह तुम्हारे लिये, तुम्हारे वालिद के लिये, शमीम के लिए, और खुद मेरे लिये भी खतरनाक है—एकदम खतरनाक!"

"मगर चाचा"

"बेटा...." जमाल की आखों में आँसू झलक आये—"मुझे

तुमसे हमदर्दी है, मैं तहे-दिल से दुखी हूँ—परन्तु मैं लाचार हूँ जयन्त !....काश ! मैं अपनी जान देकर भी तुम्हारी तकलीफ रफा कर सकता ! मगर कैसे हो सकता है ऐसा ! सारी दुनिया की मुखालफत कर सकता हूँ मैं मगर अपने दोस्त केशव के साथ दगा नहीं कर सकता, बेटा ! थोड़ी-सी बात के लिए दोस्ती को कुर्बानी नहीं कर सकता मैं। 'दोस्त' कितना प्यारा अलफाज है, बेटा ! जान देकर भी खरीद लेने लायक है !....

तुम सच मानो, दुनिया की कोई भी ताकत मुझे केशव के खिलाफ नहीं ले जा सकती। मैं अपने सारे अरमानों की कुर्बानी कर सकता हूँ, उस दोस्त की राहत के लिये। तुम यकीन न करोगे कि केशव ने, मेरे हिन्दू दोस्त केशव ने, अनगिनत बार मुझ नाकाबिल को झिड़कियाँ दी हैं, कितनी बार मुँह पर तमाचे मारे हैं, सैकड़ों बार मेरे मजहब पर भद्दे तरीके से कीचड़ उछाला है—और मैंने हर बार उसे माफ किया है, इसलिए कि मुझे उससे मुहब्बत है। वक्त के दौड़ से भी हमारी मुहब्बत की दौड़ तेज है, बेटे !

"मालूम हो गया चाचा ! कि आप मेरी सहायता नहीं कर सकते। आपकी दृष्टि में एक निरपराध व्यक्ति के उजड़ जाने से बढ़कर आपकी दोस्ती का महत्व अधिक है। आप मेरी दुनिया वीरान कर देना चाहते हैं जमाल चाचा, तो यही सही !...." आवेश में आकर जयन्त उठ खड़ा हुआ !

"बेटा !"

"मैंने घर छोड़ने का दृढ़ निश्चय कर लिया है। और अब कोई भी ताकत मुझे घर तक वापस नहीं ले जा सकती—मैं जाऊँगा जहाँ भाग्य ले जाय। अफसोस कि आप भी बुजदिल निकले !...."

"जयन्त ! ऐसा न कहो, बेटा जयन्त ! मैं बुजदिल नहीं,

रा हमदर्द हूँ, तुम्हारे तकलीफों का साथी हूँ—मगर अफसोस इस वक्त बेबस हूँ, कुछ कर नहीं सकता मैं !...." मिर्जासाहब जयन्त का हाथ पकड़ लिया—"मैं मिन्नत करता हूँ, बेटे ! न जाओ तुम ।"

"चाचा"

"जयन्त...!"

"शमीम कहाँ है ? चलते वक्त जरा उससे मिल लूँ । ईश्वर फिर कभी भेट हो या न हो ।"

"बेटा, वह तो आज चार बजे ही अपने मामू के घर चली ।"

"उफ ! चारों ओर निराशा ही निराशा ! अंधेरा ही अंधेरा !" हताश वाणी में बोला—"चाचा ! मैं जा रहा हूँ । आपको दोस्ती की कसम ! मेरे जाने की खबर पिताजी को न जयेगा...." जयन्त दरवाजे की ओर बढ़ा । ठीक दरवाजे के शमीम का पास-पोर्ट साइज का फोटो टंगा था । हाथ र उसने वह चित्र उतार लिया जमाल चाचा कुछ न बोले । उस अभागे युवक की दयनीय अवस्था देखते रहे । जयन्त वह जेब में रखकर द्रुतगति से बाहर चला गया । जमाल चाचा से कुर्सी पर बैठ गये । जयन्त बड़बड़ाता चला जा रहा रहा था विशाल जनपथ पर जाता हुआ कोई फकीर गा रहा था—बछुड़े हुए मिलेंगे फिर, खुदा ने गर मिला दिया ।"

* * * *

जयन्त के घर न लौटने पर सेठ केशवराव ने अपने नौकरों चिन्तित स्वर में पूछा—

"जयन्त नहीं आया ?...अब तक नहीं आया । आखिर गया ?"

"सरकार ! कुछ पता नहीं छोटे लाबू का। कल शाम से ही लापता है ..."

"कल शाम से ही ? और अब तक नहीं आया—हुआ क्या, गया कहाँ ?....रतुआ ?"

"जी सरकार !"

"शोफर से कह दे, मोटर तैयार करें। मैं जान गया जयन्त को जिसने भगाया है, उसका नाम है जमाल !"

* * * *

"जमाल !" सेठजी का स्वर तीव्र था।

"आओ केशव, तशरीफ रखो।"—मिर्जासाहब के स्वर में गम्भीरता थी।

"मैं पूछता हूँ, जमाल ! जयन्त कहाँ है ?"

"जयन्त ?...."

"हाँ जयन्त....मेरा बेटा जयन्त ! बोलो, कहाँ है ?"

"जयन्त यहाँ नहीं है, मेरे दोस्त....!"

"तुमने उसे कहीं भेज दिया है, कहीं छिपा दिया है। तुमने मेरा संसार उजाड़ दिया है, तुमने मेरे बेटे पर जादू कर दिया है...."

"ऐसा न कहो, केशव ! ऐसे बद्अलफाज मुंह से मत निकालो। मैं सब कुछ कर सकता हूँ, मगर तुम्हारे साथ दगा नहीं कर सकता—फरेब नहीं कर सकता...."

"शमीम कहाँ है ?"

"वह अपने मामू के घर गई हुई है...."

"मामू के घर ?...." सेठ केशवराव अट्टहास कर उठे—"मैं कहता हूँ जयन्त के साथ है वह। दोनो को तुमने कहीं भाग जाने के लिए सलाह दी है। तुम नहीं समझ रहे हो कि मेरा सुख में

ला हुआ बेटा, बाहरी दुनियाँ के कष्टों का सामना कैसे कर
गा ? दगाबाज दोस्त, तुम लुटेरे हो—गिरहकट हो !"

●

१२

अनुभवहीन जयन्त को कानपुर शहर में विशेष कठिनाईयों सामना करना पड़ा। इस समय उसके मनीवेग में केवल दस कुछ आने शेष थे। उन्हीं को लेकर जयन्त जीवन के कठिन से कठिन कष्टों का सामना करने के लिए दृढ़ संकल्प हो गया ! कानपुर में आते ही उसने एक होटल में बसेरा लिया और में इधर-उधर नौकरी की खोज में घूमने लगा। आजकल ी इतनी सस्ती नहीं कि उसे तुरन्त मिल जाती। जयन्त कई तक इधर-उधर मारा-मारा फिरता रहा-यहाँ तक कि पास उसकी पूँजी समाप्त हो गयी ! भीख माँगने की नौबत आ । उसने होटल से अपना ड़ेरा उठा लिया और आकर एक धर्मशाले में रहने लगा।

दिन पर दिन उसकी अवस्था चिन्ताजनक होती गयी। कमीज फट गयी, धोती चिथड़ों में बदल गई। रुपया अशर्फियों से खेलने वाला जयन्त आज कौड़ियों का मुँहताज गया था। मोटर पर चलने वाले जयन्त के लिए एक छकड़ा भी न रहा। विधि की बिडम्बना है भाग्य का चक्र हैं यह। दुरूह कष्ट झेल रहा था वह। घर लौटकर न जाने का उसने य कर लिया था। उसके गाल सूख गये थे, हड्डियाँ निकल थीं। पेट भूख से हाहाकार कर रहा था। और वह अभागा ों का चक्कर काट रहा था, नौकरी के लिए, मगर सभी निराशा, अवहेलना एवं अनादर ही सहना पड़ रहा उसे।

आज दस दिनों से बराबर वह 'दि कानपुर स्पिनिङ्ग एण्ड वीविङ्ग मिल्स' में जा रहा था और एक छोटा-सा काम पाने के लिए कभी दरवानों की, कभी क्लर्कों की और कभी मिल की अधिष्ठात्री मिसेज वर्मा का हाथ जोड़कर चिरौरी करता। मिल की मालकिन मिसेज वर्मा में यों तो सुन्दरता के साथ-साथ दयालुता भी थी, मगर न जाने क्यों उन्हें भी इन अभागे युवक पर दया नहीं आ रही थी। जब-जब वह उनके सामने पेश किया जाता तब-तब उसे एक उत्तर मिलता—"कल आना"—और वह पत्थर-सा दिल लेकर कल आने के लिए लौट आता।

मिसेज वर्मा ही इस समय मिल की मालकिन थीं। मिस्टर वर्मा आज से तीन साल पूर्व जब गत हुए उस समय मिसेज वर्मा केवल 'स्वीट सेविन्टी' न थीं—मगर पति के मरते ही उन्होंने बड़ी ही योग्यता के साथ अपना व्यापार सम्हाल लिया और कार्य सुचारु रूप से पूर्ववत् चलने लगा, मानों कुछ हुआ ही न हों।

मिसेज वर्मा के सम्बन्ध में अनेक प्रकार की बातें लोगों में फैली हुई थीं। कोई उनकी योग्यता की सराहना करता तो कोई उनकी स्वच्छन्दप्रियता की निन्दा। यह सच था कि मिसेज वर्मा पुरुष समाज में बहुत घुल-मिलकर रहती थीं और कभी-कभी जब वे मिल निरीक्षण करने आती तो उनके सुकोमल शरीर पर मूल्यवान मर्दाने वस्त्र होते थे—यही कारण था कि कुछ लोगों को उनके आचरण पर अविश्वास होने लगा था।

आज बड़ी आशा लेकर जयन्त उनके पास आया था, मगर ज्योंहीं उसके कान में फिर वही 'कल आना' सुनाई पड़ा तो उसका हृदय रो उठा, मृतप्राय अभिमान कसक उठा—उफ्! यह औरत उसे एक साधारण आदमी समझ रही है? यह नहीं जानती कि फटे कपड़ों से झांकता हुआ यह दीनहीन शरीर उससे

कम वैभवशाली नहीं। उसके जैसी चार मिलों को खरीद लेने की उसमें क्षमता है—मगर आज समय के फेर से उसके पास एक पैसा भी नहीं, एक कौड़ी भी नहीं, पहनने को साबूत कपड़े भी नहीं। आज दो दिनों से वह उपवास कर रहा है, केवल पानी के आधार पर जी रहा है। उसके पैरों में शक्ति नहीं रह गई है। चार पग चलते ही उसका सर चकरा जाता है, आँखों के आगे अन्धेरा छा जाता है। आज नौकरी की लालच से बड़ी आशा लेकर, गिरते पड़ते यहाँ तक आया था, मगर हाय! उसके कानों में फिर वही निराशाजनक शब्द गूंज उठे—'कल आना'!' –और आवेश में आकर वह तेजी के साथ बाहर की ओर चला, मगर मिल के दरवाजे पर पहुँचते ही, चक्कर आ गया और धड़ाम से गिर पड़ा वह।

इस समय उसकी दशा अत्यन्त सोंचनीय हो रही थी। उसकी वेश-भूषा, उसकी मुखाकृति देखकर, कोई भी यह नहीं कह सकता था कि वह एक वैभवशाली पिता का पुत्र है और कुछ दिन पहले ही वह दूध की नदी में नहाता तथा रुपयों से खिलौने की तरह खेलता था।

मिल के दरवान की घुड़की सुनकर वह धीरे से उठा उसकी आँखों में आँसू आ गये। वह धीरे-धीरे पग बढ़ाता हुआ शहर की ओर चला। अब उसने भीख माँगने का निश्चय कर लिया था। उसका कलेजा मुंह को आ रहा था—कैसे वह भीख माँग सकेगा? जो अन्जुली भरकर रुपये लुटाता था, आज वह एक-एक पैसे की भीख कैसे माँग सकेगा!

एक साहब को आता देखकर, उसके हृदय में कुछ साहस का संचार हुआ। आगे बढ़कर उसने करुणामिश्रित स्वर में कहा—
"साहब! कुछ सहायता...."

अभी उसकी बात मुंह में ही थी कि गरज पड़े वे साहब—

"भीख माँगते शर्म नहीं आती—इतना हट्टा-कट्टा होकर भीख माँगता है, चल हट !" और वे साहब अपने मुँह से आग उगलते हुए चले गये।

जयन्त धम्म से सड़क के किनारे बैठ गया। उसके नेत्र झर-झर अश्रु वर्षा करने लगे। मगर उसे उठाने वाला कोई न था, जो भी आता उपेक्षित दृष्टि डालकर आगे बढ़ जाता। सड़क के किनारे बैठा जयन्त कई घण्टों तक तड़पता रहा, मगर हृदय की ज्वाला शान्त नहीं हुई।

जहाँ वह बैठा था, उसके सामने ही एक होटल का विशाल भवन था। 'पैराडाइज होटल' उसका नाम था। जयन्त देख रहा था कि कितने ही बाबू लोग होटल में प्रवेश कर रहे थे, और कितने ही अपनी क्षुधा शान्त कर बाहर आ रहे थे—परन्तु सड़क के किनारे बैठे हुए जयन्त को कोई एक पैसा देने वाला नहीं था। उसके पेट में क्षुधा की भयंकर ज्वाला धधक रही थी। वह डगमगाते पैरों से उठा और होटल की ओर बढ़ा। उसने सोचा कि चलकर होटल के मैनेजर से कोई नौकरी माँगे—और नहीं तो किसी 'बेयरा' की जगह या झाड़ू देने का कार्य ही मिल जाय! इस समय निकृष्ट-से-निकृष्ट कार्य करने के लिए भी प्रस्तुत था वह।

होटल के दरवाजे पर बैठे मोटे दरवान की परवाह न कर जयन्त अन्दर जाने लगा। दरवान चिल्लाया जोरों से—"कहाँ जाता है ? निकल बाहर !"

जयन्त को क्रोध आ गया उस दरवान की दुष्टता पर, साथ ही तरस भी आया अपनी विवशता पर। इस समय उसकी वेश-भूषा तथा अवस्था ही ऐसी थी कि सभी उसे दुत्कार सकते थे।

"भाई ! मैं नौकरी चाहता हूं ! मिहरबानी करके मुझे अन्दर जाने दो...." जयन्त ने कहा। मगर उस दरवान को जरा भी दया न आई। वह उसे गालियाँ देने लगा गाली सुनकर जयन्त को क्रोध आ गया। पता नहीं कहाँ से ताकत आ गई उसमें कि उसने जोरों से उस मोटे दरवान को सड़क पर ढकेल दिया और लपक कर अन्दर चला गया।

भीतर होटल की साज-सजावट अत्यन्त उत्कृष्ट थी। संगमर-मर की मेजों के निकट बैठे हुए कितने ही मनुष्य अपने-अपने राग-रंग में तल्लीन थे। जयन्त को वहाँ कोई सभ्य दिखाई नहीं पड़ा। जितने थे, सभी के चेहरे से अभद्रता टपक रही थी। उसे लगा जैसे यह होटल नहीं, बदमाशों का अड्डा हो—ऐसे बदमाश, जो सफेद वस्त्रों की ओट में काले काम किया करते हैं और इसका प्रमाण भी उसे शीघ्र ही मिल गया।

अभी-अभी जयन्त डाइनिंग हाल में खड़ा आश्चर्यमिश्रित आँखों से होटल की आकर्षक साज-सज्जा देख ही रहा था कि पास के कमरे से हृदयविदारक करुण स्वर उसे सुनाई पड़ा—"मुझे छोड़ दो—जाने दो!" स्वर इतना करुणा था कि जयन्त अपने को सम्हाल न सका! वह बिना परिस्थिति पर विचार किये ही उस प्रकोष्ठ की ओर लपका। जरा सा धक्का देते ही प्रकोष्ठ का द्वार खुल गया और वहां पर जयन्त ने देखा, एक ऐसा लज्जाजनक दृश्य की जिसकी गणना नहीं। एक युवती को घेरे हुए 'सभ्य मनुष्यों की पोशाक में' कई गुण्डे खड़े थे। उस युवती के शरीर पर के वस्त्र अस्त-व्यस्त थे। वह पूर्णतया विवस्त्र हो रही थी और सभ्यता के नाम पर कलंक लगाने वाले वे निशाचर, उस पर पाशविक आक्रमण करने को प्रस्तुत थे। जयन्त को वहाँ आया देख, वे सब आश्चर्य तथा क्रोधपूर्ण दृष्ठि से उसकी ओर देखने लगे।

"क्या चाहता है तू, भिखमंगे ?" उसमें से एक आगे बढ़ आया- "भाग यहाँ से !" उसके मुँह से शराब की बू आ रही थी।

जयन्त के शरीर में इतनी शक्ति तो थी नहीं कि वह उन बदमाशों का सामना करता, मगर उसका हृदय इस समय बेतरह क्रोध से भर गया था। वह बोला—"होटल को दुराचार का अड्डा बना लिया है तुम लोगों ने ?"

सब बदमाश क्रोध से भभक उठे। उनमें से एक ने आगे बढ़कर जयन्त का गला पकड़ लिया।

"खबरदार !...." उपर से आवाज आई। सभी के नेत्र ऊपर उठ गये। उन्होंने देखा एक अप्सरा-सी सुन्दरी खड़ी है सीढ़ियों पर। बदमाश ने तुरन्त ही जयन्त का गला छोड़ दिया, मानों उस युवती के आज्ञा के विरुद्ध कार्यं करने की क्षमता उनमें न हो। जयन्त की भी दृष्टि उस युवती पर जा पड़ी। वह चौंक पड़ा, आश्चर्य तथा हैरानी से ! उफ ! मिसेस वर्मा यहाँ ? बदमाशों के इस अड्डे में ? जयन्त अवाक रह गया। यह उसकी आँखों का भ्रम है या दैव-दुर्विपाक !

"यहाँ आओ तुम !" मिसेज वर्मा के स्वर में आज्ञा की झलक थी। जयन्त सीढ़ियां चढ़ कर उसके पास पहुँचा। मिसेज वर्मा ने उसे अपने पीछे-पीछे आने का संकेत किया। जयन्त ने एक सुसज्जित कमरे तक उसका अनुसरण किया।

"बैठो।" मिसेज वर्मा ने कहा। जयन्त एक कुर्सी पर बैठने लगा।

"वहाँ नहीं !" मिसेज वर्मा ने कहा—"जमीन पर...." अब जयन्त को मालूम हुआ कि इस समय वह गरीब है, उसे कुर्सी पर बैठने का अधिकार नहीं। वह जमीन पर बैठ गया।

"तो तुम यहाँ भी पहुँच गये ?"

"जी हाँ, नौकरी की खोज में यहाँ भी अकस्मात आ पहुँचा हूँ, परन्तु...."

"यह होटल मेरा ही है। उन बदमाशों का ख्याल न करना वे न जाने कहाँ से आकर उपद्रव कर रहे थे। मैंने उन्हें दण्ड देने की व्यवस्था कर दी है...." मिसेज वर्मा ने कहा—"हाँ, तो तुम नौकरी चाहते हो ? कौन-सी नौकरी करोगे ?"

"जो भी मिल जाय...."

"कल आना मेरे आफिस में—तुम्हें कोई काम मिल जायेगा। यह लो ! इससे अपना खर्च चलाना...." मिसेस वर्मा ने उपेक्षा से उसके सामने एक रुपया फेंक दिया। जयन्त ने रुपये की ओर देखा तक नहीं। उठकर चला गया।

दूसरे दिन फिर वही दयनीय दशा लेकर जयन्त 'दी कानपुर स्पिनिंग एण्ड वीविंग मिल्स' की अधिष्ठात्री मिसेज बर्मा के सामने उपस्थित हुआ। मिसेज वर्मा ने एक बार उसे ऊपर से नीचे तक घूर कर देखा। जयन्त स्थिर खड़ा रहा।

"तुम क्या काम कर सकते हो ?" पूछा मिसेज वर्मा ने।

"पेट पालने के लिए जो भी काम आप दे सकें, वह करने को तैयार हूँ मैं...फिर भी यदि आप कोई लिखने-पढ़ने का काम मुझे देने की कृपा करें तो आभारी होउँगा...." जयन्त ने नम्रता-पूर्वक कहा।

"पढ़ने-लिखने का काम ?" मिसेज वर्मा को आश्चर्य हुआ, यह सुन कर कि यह दीनहीन नवयुवक पढ़ा लिखा भी है।

"जी हां !...मैंने फर्स्ट डिवीजन में एम० एस-सी पास किया है..." जयन्त ने कहा। मिसेज वर्मा ने आश्चर्यान्वित दृष्टि से अभागे युवक की ओर देखा और बोली—"और तुम्हारी यह

दशा ?"

"गरीबी के दिन ऐसे ही होते हैं, मैडम ! कौन समझ सकता है, कौन सुन सकता है मेरी कष्टमय कहानी, मेरी करुणाजनक गाथा !" जयन्त के मुख से सहसा ही एक दीर्घ निश्वास निकल पड़ी और मिसेज वर्मा को उस अभागे युवक पर तरस आ गई।

"मेरे पर्सनल असिस्टेण्ट की जगह खाली है। मैं तुम्हें यह काम दे सकती हूँ....कर सकोगे तुम ?"

"मैं व्यापार के सभी दाँव-पेंच जानता हूँ। आप मुझ पर विश्वास कर सकती हैं...."

"यह पत्र देखो और इसे पढ़कर मुझे राय दो...." मिसेज वर्मा ने टेबुल पर से एक बड़ा-सा लिफाफा उठाकर उसके हाथ में दे दिया। जयन्त ने लिफाफे में से चिट्ठी निकाली, पढ़ा और दस मिनट तक ध्यानमग्न होकर न जाने क्या सोचता रहा।

"मैडम !" जयंत गम्भीर मुद्रा में बोला—"आपने दी इम्पोर्ट ऐण्ड एक्सपोर्ट काटन एक्सचेंज से पाँच सौ टन रूई का कन्ट्राक्ट आज से दो महीने पहले पाँच सौ रुपया टन के भाव में किया था। मगर आजकल रूई का भाव पाँच सौ साठ रुपया टन हो गया है और यह कम्पनी अपना बेचा हुआ माल, इस समय इस नये भाव में खरीदने को इच्छुक है....इस तरह लगभग आपको तीस हजार रुपये का लाभ हो रहा है ! लेकिन मेरी राय यह है, जितना माल आपके मिल में दो महीने तक खप सके उसे छोड़कर शेष को आप उस कम्पनी के हाथ बेच सकती हैं। मेरे विचार में 'रॉ' काटन का भाव और ऊपर जायगा – ऐसी हालत में अपना स्टाक खाली कर देना ठीक न होगा...."

"शाबास ! यही मेरी भी राय है..." उस युवक की प्रतिभा देखकर मिसेज वर्मा को महान आश्चर्य हुआ।—"तुममें मेरे पर्सनल असिस्टेण्ट (सहकारी) बनने की री योग्यता है। तुम कल से काम आरम्भ कर दो। आज खजांची से कुछ रुपये लेकर अपने कपड़े-लत्ते ठीक कर लो। दो एक सूट भी बनवा डालो। तुम्हें पांच सौ रुपया प्रति माह मिलेगा...."

"पांच सौ रुपया प्रति माह....?" जयन्त को अपने कानों पर विश्वास ही न हुआ। जो आज भीख मांग रहा था, वह कल से एक बड़े मिल की अधिष्ठात्री का प्राइवेट सेक्रेटरी तथा पांच सौ रुपया पाने वाला पर्सनल असिस्टेण्ट बन जायगा ? कैसा आकस्मिक परिवर्तन है यह ?

और दूसरे ही दिन जिस समय अपने नये रूप में जयन्त मिसेज वर्मा के सामने खड़ा हुआ, तो उन्हें महान् आश्चर्य हुआ—यह देखकर कि उनका सहकारी वास्तव में एक सुन्दर युवक है !

जयन्त ने बड़ी योग्यतापूर्वक कार्य सम्भला। मिसेज वर्मा ऐसा योग्य सहकारा पाकर अत्यन्त प्रसन्न थी और जयन्त को बड़े ही अन्दाज से मुस्कुरा कर आर्डर दिया करती थी। थोड़े ही दिनों में जयन्त की ख्याति मिल भर में फैल गई। वही दरवान, जिसने एक दिन उसे ठोकर मारी थी, अब उसके पैर चूमता था। जयन्त की अनोखी प्रतिभा ने, उसके अकृतिम सौन्दर्य ने तथा उसके बातचीत करने के ढंग ने मिसेज वर्मा को आशातीत प्रभावित किया था। मिसेज वर्मा सदैव उसे साथ रखतीं—उसके कष्ट आराम आदि के विषय में पूछती रहती।

मगर मिसेज वर्मा का चरित्र जयन्त के लिए अगम्य था, दुर्भेद्य था। वह समझ ही नहीं पाता था कि यह स्त्री क्या है ?

१३

"सेक्रेटरी !"

"यस मेडम !"—जयन्त झटके के साथ अपनी कुर्सी पर से उठा और मिसेज वर्मा के सामने आ खड़ा हुआ।

"इन पत्रों का उत्तर अभी टाइप कराकर भेज दो—देर न हो...." मिसेज वर्मा ने उसके हाथ पर कई पत्र रख दिये—"कमर्शियल बैंक ऑफ बाम्बे ने लिखा है कि वे हमारे दस लाख बीस हजार के ड्राफ्ट्स का भुगतान दे चुके और हमारा उनके यहाँ अब केवल आठ लाख पचीस हजार रुपये जमा है। उन्हें लिखो कि और रुपये शीघ्र ही भेज दिये जा रहे हैं और मैं कल स्वयं बम्बई के लिये रवाना हो रही हूँ उनका रिप्रेजेन्टेटिव विक्टोरिया टर्मिनस पर तैयार रहे।"

"आप बम्बई जायँगी ?....किसलिए ?"

"इधर बहुत दिन हुए बैंक का हिसाब समझा नहीं गया है, उसे समझना है। इसके अतिरिक्त दो एक मेरे निजी काम है, तुम यहाँ का काम देख लेना...."

"कितने दिन आपको लगेंगे ?"

"आठ दस दिन लग सकते हैं, मगर जहाँ तक हो सकेगा मैं शीघ्र आने का प्रयत्न करूंगी...."

जयन्त कागजों को लेकर अपनी मेज पर चला आया और आवश्यक कार्य करने लगा। मिसेज वर्मा आराम कुर्सी पर बैठकर पैर हिलाती हुई एकटक जयन्त का चेहरा देखने लगी। उस समय

जयन्त तन्मयता पूर्वक अपना कार्य कर रहा था।

"सेक्रेटरी !"

"यस मैडम !" जयन्त तेजी के साथ उठा।

"फोन पर कोई बुला रहा है, उससे कह दो कि मैडम मौजूद नहीं है।"

जयन्त ने आगे बढ़कर फोन का रिसीवर उठा लिया। जाने क्या सुना, फिर मिसेज वर्मा से बोला—"शेयर डीलर्स एशोशिएशन का फोन है मैडम ! काटन शेयर का मार्केट पाँच परसेन्ट डाउन गया है। उनका कहना है कि आपके पास जितने शेयर्स हों फौरन बेच डालें – नही तो ज्यादे घाटे में रहेंगी..."

मिसेज वर्मा ने कुछ देर सोचा, फिर बोली—"उनसे कह दो कि मेरे सब शेयर्स करेण्ट रेट में बेंच दे ..."

"मगर मैडम ! मेरा अन्दाज है कि शेयर मार्केट डाउन होकर फिर अप जायगा। शेयर्स बेचना ठीक नहीं ?" जयन्त ने कहा।

"यहाँ मेरी राय तुमसे नहीं मिल रही है, सेक्रेटरी !" मिसेज वर्मा के नेत्र अपने नौजवान सहकारी की आँखों से जा मिले—"शेयर मार्केट डाउन जायगा—जैसा मैंने कहा है, तुम उन्हें बोल दो...."

"आल राइट मैडम !" —जयन्त ने फोन पर जाकर न जाने क्या-क्या बातें की, फिर रिसीवर रखकर अपनी कुर्सी पर जा बैठा और अपना काम पूर्ववत् करने लगा।

"सेक्रेटरी !"

"यस मैडम !"—जयन्त को उठना पड़ा।

"चपरासी कहाँ गया है ? 'दि इम्पोर्ट ऐण्ड ऐक्सपोर्टकाटन एक्सचेञ्ज' का ट्रैरिंग एजेण्ट वेटिङ्ग रूम में बैठा है। तुम उससे

जाकर कहो कि मेडम मोजूद नहीं है— जो कुछ बात कहना हो तुमसे कर ले....''

जयन्त वेटिङ्ग रूम में आया। उसने देखा— एक अधेड़ अवस्था का मनुष्य आधुनिक वेषभूषा में वहाँ बैठा हैं! जयन्त के आते ही उस मनुष्य ने उठकर तपाक से हाथ मिलाया। जयन्त बोला— ''मुझे दुःख है कि मैंडम उपस्थित नहीं हैं! मैं उनका सहकारी हूँ। आप सारी बातें मुझसे तय कर सकते हैं...''

''थैंक्स!—'' एजेन्ट बोला—''आपको मैंने एक महीना पहले इत्तला दी थी कि आपका पाँच सौ टन 'राँ-कॉटन' जो हमारी फर्म ने आपके हाथ बेचा था, उसे हमारे हाथ नये दर में बेच दे, मगर आपने एक टन भी नहीं बेचा—अच्छा ही किया क्योंकि 'राँ-कॉटन' का भाव ऊपर चढ़ता चला गया। मगर अब मार्केट में बड़ी उथल-पुथल मची है। दो ही चार रोज के बाद मार्केट एकदम डाउन चला जायगा! आपके लिए यह उचित होगा कि अपना सब स्टाक इस बढ़े हुये रेट में खाली कर दें ..''

''जी नहीं! मेरे विचार से....'' जयन्त कहने लगा—''कॉटन का मार्केट अभी कुछ दिनों तक और ऊँचा जायगा। अभी हम आपसे इस दर में कोई भी कन्ट्राक्ट करने को प्रस्तुत नहीं....''

एजेण्ट उठ खड़ा हुआ। जयन्त अपने आफिस में आया! मिसेज वर्मा को सब बातें बता दी। मिसेज वर्मा ने उसका अनुमोदन किया।

''सेक्रेटरी!''

''यस मैडम!....'' जयन्त अपने कुर्सी पर बैठने जा रहा था कि उसे पुनः लौटना पड़ा।

''तुम अवश्यक पत्रादि पर मेरे हस्ताक्षर करा लो और सारा काम शीघ्र समाप्त कर मेरे साथ चलने को तैयार हो जाओ।

पत्थर के पुतले की भाँति जयन्त ने सारा काम समाप्त किया।

इसी प्रकार उसकी कार्यप्रणाली चालू रहती थी। मशीन की तरह काम करना पड़ता था उसे। उस दिन संध्या को वह मिसेज वर्मा के साथ पेराडाईज होटल गया। यह होटल मिसेज वर्मा का था। उन्हीं के प्रबन्ध में यह चल रहा था। बड़े-बड़े रईस बाहर से आकर ठहरते थे—ऐसा लोगों का विश्वास था।। मगर जयन्त को न जाने क्यों वहाँ का वातावरण पसन्द न था। उसने एक बात पर विशेषरूप से लक्ष्य किया कि प्रायः सभी उपस्थित मनुष्य उसको ओर कौतूहलपूर्ण उपेक्षा की दृष्टि से देख रहे हैं, मानों उसका मिसेज वर्मा के साथ होना कोई आश्चर्यजनक एवं नवीन बात हो। जब से वह मिसेज वर्मा के यहाँ नौकरी की थी, तब से आज पहले ही पहल वह इस होटल में आया था। वहाँ की कार्य-प्रणाली देखकर उसे मिसेज वर्मा पर कुछ अश्रद्धा-सी होने लगी थी। मगर उसे तो अपनी नौकरी बरकरार रखनी थी, इसलिए उसे मिसेज वर्मा के हर एक कार्य में हाथ बटाना पड़ता था।

होटल में ही दोनों ने भोजन किया। इसके पश्चात् मिसेज वर्मा मिल' के अहाते में बने हुए अपने विशाल बंगले में चली गईं और जयन्त जनरलगंज के अपने छोटे से मकान में आ गया, जिसे उसने हाल ही में किराये पर लिया था।

दूसरे दिन प्रातःकाल मिसेज वर्मा को फोन पर खबर मिली कि कॉटन शेयर्स का भाव सात परसेण्ट अप हो गया है। मगर उसने तो कल ही अपने सब शेयर्स पाँच परसेण्ट डाउन में बेच दिये थे। अब उसके पास एक भी शेयर न था। उसे अपनी इस हानि पर अत्यन्त शोक हुआ और यह मानना पड़ा कि उसके नौजवान सेक्रेटरी की व्यापारिक योग्यता उससे बहुत अधिक है।

सेक्रेटरी !''

"यस मेडम !"

"मेरे बाहर जाने की सारी तैयारी कर दी तुमने ?"

"जी हाँ ! सब तैयारी हो चुकी है। आप की अटैची भी मोटर में रख दी गई है। शोफर प्रतीक्षा कर रहा है...."

"मैं जा रही हूँ। सम्भवतः दस दिन लौटने में लग जायेंगे। इस बीच सारे काम का भार तुम पर रहेगा। कोई जटिल समस्या आ पड़ने पर मुझे तार दे देना !"

"बहुत अच्छा !"

"मेरे रवाना होते ही तुम कमर्शियल बैंक आफ बाम्बे को वायर कर देना कि मैंडम श्री अप से रवाना हो गई हैं। रिप्रे-जेन्टेटिव स्टेशन पर प्रतीक्षा करे।"

"बहुत अच्छा !"

और उसी दिन मिसेज वर्मा बम्बई के लिए रवाना हो गई। उनके जाने के तीन दिन बाद, जबकि जयन्त मिसेज वर्मा के प्राई-वेट आफिस में बैठा हुआ कोई आवश्यक व्यापारिक समस्या सुल-झाने में निमग्न था कि चपरासी ने आकर सूचना दी—एक सज्जन आप से मिलना चाहते हैं। जयन्त ने चपरासी को आदेश दिया कि आवश्यक कार्यों में संलग्न रहने के कारण वह आफिस नहीं छोड़ सकता—उन सज्जन को यहीं भेज दे।

दूसरे ही क्षण जब कि उससे मिलने आये हुए सज्जन ने उस कमरे में प्रवेश किया तो जयन्त आश्चर्य तथा भय से काँप उठा। वे सज्जन और कोई नहीं, उसके पिता थे—सेठ केशवराव ! जयन्त आवेग से अपनी कुर्सी छोड़, उठ खड़ा हुआ। उसके चेहरे पर भय-मिश्रित कालिमा छा गई—"आप ?" उसके मुँह से अस्पष्ट आवाज निकली।

"शिराज से सब पता लगा, नहीं तो मुझे स्वप्न में भी यह

विश्वास न आता कि तू यहां इस तरह गुलामी कर रहा है....'' सेठ केशवराव जयन्त के पास चले आये और उन्होंने उसके कन्धे पर जोरों से हाथ रख दिया—''जयन्त ! तूने बहुत नादानी की। जरा अपनी दशा देख ? कितना सूख गया है ? हड्डी-हड्डी दिखाई पड़ रही है....''

''पिताजी !...'' जयन्त का भय तिरोहित हो गया। मुख पर क्रोध-मिश्रित घृणा के भाव स्पष्ट हो आये—''आप भूल जा रहे हैं कि ईस समय आप कानपुर की सबसे बड़ी मिल की अधिष्ठात्री के कमरे में हैं....और आपको जानना चाहिये कि मेरा समय इस वक्त बहुत मूल्यवान है ?''

''मूल्यवान हैं !....'' सेठ केशवराव क्रुद्ध स्वर में बोले—''तेरा समय मूल्यवान है ?...और मेरा ?''

''यह आप जाने, जितना समय आपने मेरा नष्ट किया है। उसमें मैं कई हजार रुपयों का वारा-न्यारा कर चुका होता।''

''नादान लड़के !....'' सेठजी हुँकार उठे—''तू भूल जा रहा है कि मैं तेरा पिता हूँ और तेरे लालन-पालन, पढ़ाई-लिखाई में मेरे सहस्रों रुपये व्यय हुए हैं....''

''आप रुपया चाहते हैं ?....'' क्रूर हंसी-हँसा—''यह लीजिये....'' जयन्त ने टेबुल पर से एक कागज उठाकर सेठजी की मुट्ठी में ठूँस दिया। वह दस हजार रुपये का एक बैंक ड्राफ्ट था—''आपके रुपये चुकता हो गये। अब आप जा सकते हैं....''

जयन्त की इस अवहेलना ने सेठजी का क्रोध और भी भड़का दिया। वे गरज पड़े—''तू मेरा...''

जयन्त ने अपने मुंह पर तर्जनी उंगली रख, उन्हें बोलने से रोक दिय—''मैं आपका नहीं, मिसेज वर्मा का हूँ। आपसे बढ़कर वे मुझे चाहती हैं...आप जा सकते हैं अब !''

"जा सकता हूँ ? ...तू मुझे आज्ञा दे रहा है ?" चिल्ला पड़े सेठजी।

"क्षमा कीजिए पिताजी, यह आपका घर नहीं जो मुझे उल्टा-सीधा कह डालेंगे। आपको अपनी वैभव, अपनी प्रतिष्ठा अपनी अपार सम्पत्ति पर अभिमान है तो आपके पुत्र को भी आत्मसम्मान का अभिमान है। यहाँ मेरा उसी तरह सम्मान है, जिस तरह आपका अपने घर पर कृपया आप घर लौट जाईये। समाज का साथ देकर अपनी प्रतिष्ठा और अपनी अपार सम्पति का उचित उपयोग कीजिये !"

अपमान ! अनादर ! अवहेलना ! वह भी अपने ही पुत्र द्वारा !

सेठ केशवराव यह सहन न कर सके ! उनके नेत्रों से अश्रु कण ढुलक पड़े, साथ ही हृदय में असीम क्रोध उबल पड़ा। वे ग्लानि से एक शब्द भी न बोल सके और तेजी के साथ कमरे के बाहर निकल गये।

जिस समय सेठ केशवराव सड़क पर खड़ी हुई टैक्सी पर आकर बैठे, उस समय ईनकी मुखाकृति पर क्रोध एवं करुणा, सम्मिलित रूप से वर्तमान थी। उनकी आज्ञा पाकर टैक्सी तेजी से भाग चली। हवा के तीव्र झोंके से उनके काँपते हुए हाथों से उड़कर, वह दस हजार का ड्राफ्ट सड़क से सटकर बहती हुई नाली में जा गिरा।

* * * *

"सेक्रेटरी !"

"यस मैडम !..."

"मेरी अनुपस्थिति में जो कुछ हुआ, विस्तारपूर्वक मुझे समझाओ...."

"आपके जाने के चौथे दिन कॉटन मार्केट काफी ऊंचा हो

गया, तो मुझे विश्वास करना पड़ा कि जल्दी ही मार्केट डाऊन जायगा और इस लिए मैंने आपको तार देकर पूछा कि यदि आप कहें तो आपका सारा स्टाक इस ऊंचे दर पर बेच दूं और मार्केट डाउन होते ही नया माल पुनः स्टाक में भर लिया जाय! उधर आपके यहाँ से उत्तर आने में देर हुई....इधर मार्केट की उथल-पुथल देखकर मुझे अपनी इच्छानुसार काम करना पड़ा और मैंने सारा स्टाक बेच दिया। जिस समय आपका यह उत्तर आया कि स्टाक न खाली किया जाय, माल बेचा जा चुका था....तीन दिन बाद ही मार्केट डाऊन होने लगा और परसों मैंने बहुत ही नीचा दर में माल खरीदकर फिर अपना गोदाम भर लिया। इस तरह कम्पनी लगभग आठ लाख के फायदे में रही...."



१४

घटना-प्रवाह में पड़कर चाहे हम शमीम को भूल जाय, मगर जयन्त उसे कैसे भूल सकता था? उसके हृदय-मन्दिर में जिस सलोनी मूर्ति का बसेरा था, वह कैसे उसके स्मृति-पट से हट सकती थी? आजकल वह मिसेज वर्मा का सहकारी बन गया था, मगर दिल उसका शमीम का पुजारी बना रहा। उस प्यारी-सी मूर्ति को छोड़कर उसका हृदय और किसी को आराधना कैसे कर सकता था?

आज कई महीने बीत गये थे। जब से उसने अपना शहर छोड़ा था, शमीम का कोई समाचार उसे नहीं मिला था। जयन्त हृदय सदैव उसके लिए व्याकुल रहा करता, मगर वर्तमान थति ने उसे ऐसा विवस कर दिया था कि वह शमीम के स एक पत्र भी न लिख सका था। आज कई दिनों से उसका

हृदय शमीम का स्मरण कर हाहाकार कर रहा था। इसलिए अर्ध-रात्रि के लगभग, जब कि वह सारे कार्यो से छुट्टी पा चुका था, शमीम को पत्र लिखने लगा—

तुम्हारे सामने मैं कितना लज्जित हूँ, यह मै कह नहीं सकता, मगर इसमें मेरा कसूर नहीं, प्रिय शमीम ! परिस्थितियों से विवश हो गया था मैं ! सच कहता हूँ शमीम ! समस्या इतनी जटिल हो गई थी कि मुझे लाचार होकर अपना प्यारा-सा घर छोड़ना पड़ा-वह घर, जिसमें अपनी बाल्यवस्था के स्वर्गीय दिवस मैंने व्यतीत किये थे, उस घर को, उस शहर को छोड़ते समय मुझे कितनी वेदना, कितनी पीड़ा, कितनी व्यथा हुई थी, कह नहीं सकता। वह केवल अनुभव करने की बात है।

जाने दो दर्दभरी कहानी को सुनकर तुम्हें दुःख ही होगा....घर से आते समय चाहे जितना दुःख रहा हो मेरे हृदय में, मगर एक बात का सन्तोष था—वह यह कि मैं प्रेम के लिए अपना सर्वस्व निछावर करके जा रहा हूँ—तुम्हारे लिए अपने सुख का, अपने ऐश्वर्य का बलिदान करके जा रहा हुँ...विश्वास करो शमीम ! प्रेम के लिए अपनी सारी विभूतियों का त्याग कर देना अत्यन्त अल्हादमय होता है...

आज, असहनोय कष्ट तथा दुरुह यातनाएं झेलने के पश्चात् मेरे दिन लौटे हैं, मेरा रुठा भाग्य मुझपर सदय हुआ है। आज-कल मैं 'दि कानपुर स्पनिङ्ग ऐण्ड वीविंग मिल्स' को अधिष्ठात्री मिसेज वर्मा का सहकारी हूँ। मिल की सारी बागडोर मेरे ही हाथों में है। यहाँ मैं उतना ही सुखी हूँ, जितना अपने घर था—सभी प्रकार की सुविधायें हैं। तुम्हारा फोटो मेरे साथ है, मगर तुम साथ नही हो। तुम्हारी सूरत मेरे दिल में हैं, मगर तुम

साथ नहीं हो। यहाँ पर मैं दुनियाँ से, समाज से, धर्म से—सबसे अलग हूँ और तड़प रहा हूँ। काश ! तुम मेरे पास होती !

शमीम ! अब मुझे दुनियाँ का डर नहीं, समाज का भय नहीं पिता की दस्तन्दाजी नहीं—अब मैं स्वतन्त्र हूँ, स्वच्छन्द हूँ, अपनी इच्छा का अधिनायक हूँ ! तुम्हारे पास यह पत्र बड़ी आशा से रहा हूँ ! तुम मुझे भूली न होगी, यही आशा-दीप उद्दीप्त मेरे जीवन को आलोकित किये हुए है। तुम अगर मुझे चाहती हो, मेरे शुष्क-जीवन से अगर तुम्हे जरा भी मुहब्बत हो, मेरे हाहाकार करते हृदय के साथ यदि तुम्हारी जरा भी सहानुभूति हो, तो पास आ जाओ। जमाल चाचा यदि आज्ञा न दें, तो भी मेरे पास आना ही पड़ेगा तुम्हें। मेरी उजड़ी हुई दुनियाँ, बसानी ही होगी तुमको। आना, जरूर आना, मेरी अच्छी शमीम !

इतने दिनों बाद हम तुम मिलेंगे। कितना आनन्द आयेगा कितना आल्हादमय जीवन होगा वह ! हम दोनों कल्लोल करेंगे और आकाश पर प्रदीप्त होता हुआ चाँद, हमारा सम्मिलन देख कर पर शीतलता की वर्षा करेगा। हम दोनों सुधारस का पान करते हुये अपने हृदय की अतृप्त प्यास शान्त करेंगे। क्यों मेरी रानी, ठीक है न !

आना ! जरूर आना ! प्रातःकाल से दस बजे रात्रि तक मिसेस वर्मा के साथ रहता हूँ, अतः आना तो आफिस में आना। पता यों है....



काँपते हुए हाथों से शमीम ने लिफाफा खोला। उसका हृदय आनन्ददायक मृदु स्पन्दन से भर गया। आज एक महीना हुआ, जब कि वह अपने मामू के घर से वापस आई थी और पत्थर का कलेजा करके उसने जयन्त के चले जाने का समाचार सुना था—

तब से वह बराबर रोती रही थी और जीवन की कष्टदायक घड़ियाँ व्यतीत करती आ रही थी।

लिफाफा खोलकर उसने अन्दर का पत्र निकाला। एक बार पढ़ा, दो बार, तीन बार! उसके चेहरे पर प्रसन्नता की आभा नृत्य करने लगी—"आऊँगी! जरूर आऊँगी, सनम!" वह अपने आप से बोली—"तुमने बुलाया है तो जरूर आऊँगी। अब्बा कभी मुझे तुम्हारे पास जाने की इजाजत न देंगे, मगर मैं आऊँगी, मेरे सनम!...." वह अठखेलियाँ करती हुई उठी—क्यों न करती वह अठखेलियाँ? आज उसके प्रियतम का पत्र जो आया था....जिसके लिये वह रात-दिन रोती रही थी, जिसकी अराधना में उसने दिन को दिन एवं रात को रात नहीं समझा था, वह उसका सनम, साक्षात पत्र के रूप में उसके पास उपस्थित हुआ था।

कागज कलम लेकर वह लिखने बैठी। उसकी लेखनी अविराम गति से चिकने कागज पर दौड़ चली। मेज के ठीक ऊपर, दीवार पर टँगी हुई घड़ी अनिमेष दृष्टि से उस प्रेम-पत्र की ओर देखती हुई कह रही थी—टक! टक!! टिक! टिक!! टिक!!!



"सेक्रेटरी...."

"यस मेडम!...."

मेरी तबीयत ठीक नहीं है। तुम जाकर स्टोर रूम का निरीक्षण कर लो। इसके बाद कल मेरी वर्षगाँठ की पार्टी के लिए कुछ प्रबन्ध करना जरूरी है...."

"बहुत अच्छा।" जयन्त चल गया।

उसी समय उस दिन की डाक लाकर चपरासी ने मिसेज वर्मा के सामने मेज पर रख दी। पचासों पत्र थे, मगर जिस पत्र ने उसका ध्यान विशेष रूप से आकर्षित किया, वह था उसके

सेक्रेटरी मिस्टर जयन्त कुमार के नाम का पत्र। पत्र के ऊपर की लिखावट स्पष्ट और सुन्दर थी, मगर स्त्री के हाथ की लिखी मालूम देती था और यही मिसेज वर्मा के आश्चर्य का कारण बनी!

जब से जयन्त उसका सेक्रेटरी नियुक्त हुआ था, तब से आज तक कोई भी पत्र उसके पास नहीं आया था मिसेज वर्मा ने कितनी ही बार उसके सम्बन्ध में पूछा था, मगर उसने बताने से इन्कार कर दिया था। यह नहीं कि मिसेज वर्मा उसके विषय में जानने को उत्सुक न हों, मगर उन्होंने उसकी इच्छा के विरुद्ध पूछना ठीक नहीं समझा और इसलिए उससे हठपूर्वक पूछा भी नहीं।

अब जब कि एक जनानी लिखावट का पत्र उसके नाम आया तो इसमें अवश्य कोई गूढ़ रहस्य है, ऐसा मिसेज वर्मा ने अनुमान लगाया। उसके हृदय में जयन्त का परिचय जानने की उत्कट अभिलाषा चरम सीमा तक पहुँच गई। उन्होंने वह पत्र अपनी जेब में रख लिया।

रात्रि में सारे कर्मों से छुटी पाकर मिसेज वर्मा ने वह पत्र निकाला और पढ़ने लगीं—

सनम!

तुम्हारा पत्र पाकर दिल को इतनी राहत हासिल हुई, मानों अंधे के हाथ चाँद लग गया हो, भिखारी मोती की माला पा गया हो। तुम्हारी याद में मैंने रोते-रोते दिन काटे और जागते-जागते रातें, मगर तुम्हारा पत्थर जैसा दिल मुझे भूल ही गया, तुम्हें मेरी याद न आई।

मुझे अफसोस है, मेरे खुदा! कि सिर्फ मेरी मुहब्बत की वजह से तुम्हें इतनी तकलीफ सहनी पड़ी, इतनी बड़ी कुर्बानी की तुमने, कि जमीनों-अस्मान के फरिश्ते भी वाह-वाह कर उठे। तुम तो इतनी दूर चले गये, मगर तुम्हारी सलोनी सूरत अभी

तक मेरे दिल में बसी है। तुम्हारा मुस्कराता चेहरा, तुम्हारी कुछ कहती हुई-सी आँखें, अब तक मुझे याद हैं।

तुमने बुलाया है—'अपनो' बनाने की उम्मीद दिलायी है। मै आऊँगी, जरूर आऊँगी, मगर अब्बा! वे आने की इजाजत नहीं देंगे हाँ नहीं देंगे, मगर उनसे किसी बात की जिक्र ही न करूँगी। तुम्हारे पास पहुँच कर, तब उन्हें खत लिख दूँगी। तुम तैयार रहना, मैं परसों दोपहर की गाड़ी से रवाना हो जाऊंगी। हाँ! मिसेज वर्मा से अभी मेरा जिक्र न करना। यकीनन मैं परसों जरूर-जरूर रवाना हो जाऊँगी—जरूर!....बस आज इतना हीं।

—शमीम।

मिसेज वर्मा ने पत्र जेब में रखकर एक ठंढी साँस ली। आज उन्हें मालूम हुआ कि अपने जिस सेक्रेटरी को अभी तक वह नादान एवं सीधा-साधा समझती आ रही थी, वह जमीन का एक बहुत लम्बा मार्ग तय कर चुका है। उसने संसार के साथ विद्रोह किया, उसने समाज का तिरस्कार, पिता का अनादर एवं दुनिया की अवहेलना सही है। उसने प्रेम की चोट, विरहाग्नि एवं गरीबी की मार सहन की है।

●

१५

अविराम गति से ट्रेन चीखती, चिल्लाती, दौड़ती बढ़ी जा रही थी, उसी के साथ-साथ दौड़ रहा था शमीम का सन्तप्त हृदय। सेकेन्ड क्लास के कम्पार्टमेन्ट में बैठी हुई वह नाना प्रकार की दुश्चिन्ताओं में बही जा रही थी। जीवन में आज पहली ही बार उसने अपने अब्बा के साथ विश्वासघात किया था

और बिना उनको कुछ बताये हुए ही, उनको अकेला छोड़कर अपने प्रियतक से मिलने चल पड़ी थी। एक क्षण के लिए भी उसने न सोचा था कि उसके चले जाने पर उसके अब्बा की क्या दशा होगी। जिसने कभी उसे अपनी आँखों से दूर नहीं किया, जिसने हमेशा उसे अपने हृदय से लगाये रखा—वह उसके भाग जाने पर कितना व्यथित, कितना दुखित होगा !

रेलगाड़ी में बैठे-बैठे उसका हृदय उद्विग्न ही रहा था। वह अपने अब्बा की बात सोच-सोचकर दुखित हो रही थी – ऊफ ! अब्बा बाजार से आयेंगे, पुकारेंगे प्यारभरी आवाज में—'शमीम !....' मगर कोई उत्तर न पाकर वे फिर उतावली से पुकार उठेंगे —'शमीम बेटा !...' और मकान की निर्जीव दीवारों से टकराकर उनकी आवाज प्रतिध्वनित हो उठेगी—"शमीम बेटा ? ..." एवं पास ही से जाता हुआ कोई फकीर गा उठेगा—"उड़ गई बुलबुल, उजड़ गया बसेरा"—तब व्यग्र होकर वे दौड़ पड़ेगें। मकान का कोना-कोना, जर्रा जर्रा वे देख डालेंगे—मगर कहाँ होगी उनकी शमीम ? वह तो होगी ट्रेन में, अपने सनम से मिलने जाती हुई....और कुछ ही देर में वह कानपुर पहुँच जायगी जिससे मिलने की आशा में उसने ईस प्रकार सारे सुखों की अवहेलना की है, उससे जा मिलेगी वह और आनन्दातिरेक से उसके गले में बाहें डालकर जगत का सारा सुख, ऐश्वर्य एवं सारा वैभव प्राप्त कर लेगी। स्नेहसिक्त स्वर में उसका प्रियतम पुकार उठेगा 'शमीम' !....विभोर-सी होती हुई उसके होंठ धीरे से हिल पड़ेगें 'मेरे सनम'—और तब नीलाकाश पर चाँद अपनी सम्पूर्ण कलाओं सहित प्रकाशमय हो चमक उठेगा।

ट्रेन का हलका-सा झटका लगा और शमीम का ध्यान भङ्ग हो गया। उसने देखा —गाड़ी एक छोटे से स्टेशन पर खड़ी है।

वह प्लेटफार्म के दूसरी ओर की खिड़की से सर निकाल कर आकाश-मण्डल पर तैरते बादलों का नृत्य देखने लगी। वह न जाने कब तक बादलों का वह कल्लोल देखती रहती, यदि कम्पार्टमेण्ड के दरवाजे पर से यह आवाज न आती...."मिजाज मुबारक !"

उसने चौंक कर पीछे सर घुमाया तो देखा- मुस्कराता हुआ शिराज खड़ा है। वह अजीब ढंग से कन्धे हिलाता हुआ डब्बे के भीतर आ रहा—"मुझे उम्मीद है कि आप मिस्टर जयन्त के पास जा रही है—है न मिस शमीम ?...." उसने कहा।

"आप ?..."

"जी हाँ मैं ही हूँ—शिराज अहमद अन्सारी !"

"चले जाइये आप यहाँ से ! मेरे पीछे-पीछे आप यहाँ भी आ पहुँचे ?"

"मिस शमीम !" शिराज ने अपना मुंह टेढ़ा किया—"इस दुनिया में अगर कोई आपसे हमदर्दी रखने वाला है, तो वह मैं हूँ। आप नाहक ही मुझपर नाराज होती हैं। आपको मदद करना मैं अपना फर्ज समझता हूँ—मगर अफसोस ! आप ऐसा नहीं समझतीं।"

"........"

"कोई नहीं जानता कि आप कहाँ जा रही हैं—मगर मैं जानता हूँ। आपकी हर एक बातों की खबर मुझे रहती है। जयन्त के बारे में, बहुत कुछ जानता हूँ। मुझे आप दोनों से हमदर्दी है, यह देखकर कि आप दोनों ने एक दूसरे को अपना दिल देकर गहरी नादानी की है। मगर अब भी सम्हलने की बजाय, ऐसी हरकतें करके बरबादी की ओर जा रही हैं आप।

मैं मुसलमान हूँ, मिस शमीम ! जयन्त मेरा दोस्त है और आप ! जाने दीजिए, क्या कहियेगा, सुनकर ?...मैं शुरू से आप लोगों के पीछे छाया की तरह रहता आया हूँ। मैं नहीं चाहता कि आप दोनों बरबादी की राह पर कदम बढ़ाये — काश ! आप मेरे दिल कि बातें समझ सकती" कुछ क्षण चुप रहने के बाद उसने फिर कहा—

"आज बाजार से लौटते वक्त मैंने देखा कि आप तांगे पर बैठकर स्टेशन की ओर जा रही हैं। मेरे मन में शक पैदा हुआ। मैं जल्दी से घर गया और जरूरी सामान लेकर स्टेशन जा पहुँचा टिकट लिया और दौड़ कर आपके पीछे वाले डब्बे में चढ़ गया। सोचा, कानपुर जैसे अनजानी जगह में आपको तकलीफ उठानी पड़ेगी, इसलिए एक मददगार की आपको जरूरत पड़ेगी—"

"मुझे आपका साथ पसन्द नहीं, मिहरबानी करके आप...."

"मैं जानता हूँ कि आप मेरा साथ पसन्द नहीं करेंगी, इस—लिए मैं आपको ज्यादा तकलीफ देना नहीं चाहता। मैं बगल के कम्पार्टमेन्ट में हूँ। किसी बात को जरूरत होने पर आप मुझे याद कर सकती हैं...." कहकर नाटकीय ढंग से कन्धे हिलाता हुआ वह चला गया। तभी गाड़ी ने सीटी दी और चल पड़ी।

शिराज की अनोखी बातों से शमीम का हार्दिक उद्वेग और भी बढ़ा दिया कुछ समझ में नहीं आता कि इस युवक के हृदय में क्या है ? अमृत या विष ! और वह उसके साथ-साथ किस नीयत से यात्रा कर रहा है ? उससे इतनी हमदर्दी क्यों दिखाता है ? भेड़ की खाल में भेड़िया, श्वेत आवरण की ओट में काला नाग तो नहीं है वह ? उसकी बातें अजीब तूफान सी होती है, बहुत ही भयानक रूप धारण किये होती हैं। उसके मुख पर सदैव भयंकरता नृत्य करती रहती है, जरूर इसका इरादा खौफनाक होगा।

* * *

"रतुआ...."

"जी सरकार !"

"वह मेरा बेटा नहीं, शत्रु है। मुंह पर कालिमा पोतने वाला है। मैं उसका बाप हूँ, मगर वह मुझे नहीं चाहता। मैं उसका जन्मदाता हूँ, मगर वह मेरी अवहेलना करता है। वह चाहता है केवल शमीम को, उस विजातीय मुसलमान छोकरी को। मैं हिन्दू हूँ, समाज का नायक हूँ, दुनिया की आँखों में प्रतिष्ठित हूँ....मैं कैसे सहन कर सकता हूँ कि मेरा बेटा एक मुसलमान लड़की से शादी करे -" सेठ केशव रात्र अपने कमरे में इधर से उधर टहलते हुए बड़बड़ा रहे थे। उनका नौकर रतुआ उनके सामने खड़ा था—चुपचाप !

"रतुआ !"—पुकारा सेठ केशव ने।

"वह मेरा इकलौता बेटा है। मेरे हृदय में उसके लिए कितना प्रेम है, कितना स्नेह है, यह तू भी जानता है...जानता है न ?.... फिर तू ही बता, क्या पिता अपने पुत्र को बुरे रास्ते पर जाते देख सकता हैं ?....मगर उसने यह सब न सोचा ? न सोचा उसने कि वह अपने ही विचारों द्वारा अपने पिता को कितना दुःख पहुँचा रहा है—उसने कुछ न सोचा, रतुआ ? और मुझ अभागे को छोड़कर अन्धे प्रेम के कीचड़ में फँस गया। अपने पिता के प्रेम पर लात मार दी उसने। मैं उस पर बिगड़ता था परन्तु हृदय में सदा स्नेह हिलोरें मारता रहा, मगर वह नादान लड़का कैसे समझ सकता था कि क्षणिक आवेश में आकर वह अपने पिता के साथ कितना अनर्थ कर रहा है ? वह एक बड़ी फर्म का संचालक है...इसी बात का घमण्ड है उसे। मैं पुत्र प्रेम से व्याकुल होकर उसके पास गया था, मगर उसने मेरा अपमान

किया, अनादर किया—और क्या-क्या नहीं किया उसने। करुणा एवं क्रोध से संघर्ष करता हुआ मैं घर लौट आया, मगर ज्वाला शान्त न हुई। सोंचता हूँ—वह भला था या बुरा, मगर था तो मेरा बेटा ? मुझे चाहिये था कि मैं उसे हृदय से लगाकर रखता, अपने से कभी दूर न करता - मैंने भूल की जरूर, मगर वह भूल नहीं कही जा सकती....हर्गिज नहीं कही जा सकती। एक पिता कैसे देखकर सहन कर सकता है कि उसका बेटा बरबादी के रास्ते पर कदम रखे ? -- इसलिए मैं बिगड़ता रहा, मगर वह नादान तब भी न सुधरा....सुधरेगा कैसे नहीं ?" एकाएक उत्तेजित हो उठे सेठ केशवराव। इस समय उनकी अवस्था ठीक पागलों की-सी हो रही थी। उनके हृदय में पुत्र प्रेम एवं क्रोध का भीषण संघर्ष हो रहा था—"रतुआ !"

"जी सरकार ?"

' मेरे बाहर जाने की तैयारी कर दे ! सूटकेस में सारी वस्तुएँ रख कर जल्द ले आ ! मैं अभी जाऊँगा उसके पास—वह अपने को समझता क्या है ? अपने शक्तिशाली पिता के साथ विद्रोह करने की शक्ति उसमें अभी आई ही कहाँ है ? मैं जाऊँगा, उससे पूछूँगा कि छोकरे भूल गया वे दिन, वे बाल्यावस्था के स्वर्णमय दिवस ! अगर वह नहीं मानेगा तो न सही, किसमें इतनी शक्ति है, किसमें इतनी हिम्मत है कि सेठ केशवराव के विरुद्ध जा सके ? मैं देखूँगा कि कैसी है मिसेज वर्मा और कैसा है उसका आवारा सेक्रेटरी ?"—सेठ धम्म से जाकर कुर्सी पर बैठ गये। रतुआ चला गया। सेठ जी बड़बड़ाते रहे—"वह छोकरा समझता है कि अपने पिता को हमेशा के लिए छोड़ दिया—यह नहीं जानता कि उसके पिता में अब भी, उस जैसे नादान छोकरे की अक्ल ठिकाने लगा देने की शक्ति है !...." सेठ जी ने विकट रूप से हुँकार भरी !

उसी समय दरवाजे पर कुछ खटका हुआ। सेठजी सर नीचा किये हुए बैठे रहे। बोले—"आ गया रतुआ! सब समान ठीक कर चुका? सेठजी दरवाजे की ओर देखा तो एकाएक चौंक पड़े जमाल तुम?" उनके कांपते हुए होठों से आवाज निकली।

"हाँ केशव, मैं हूँ!"— मिर्जा जमालुद्दीन स्थिर गति से अन्दर चले आये। उनकी मुखाकृति पर म्लानता के चिह्न प्रकट हो रहे थे।

"तुमने मुझे नष्ट कर दिया जमाल!...." कहते-कहते सेठ केशवराव की आँखें भर आईं—' किस जन्म का बदला लिया तुमने? क्यों इतनी दुश्मनी अदा की मुझसे! मेरा सुख, मेरा चैन, मेरा धर्म, मेरा लड़का, सब कुछ छीन लिया तुमने—तुम्हारी लड़की ने...."

"केशव!...." आगे बढ़कर मिर्जासाहब ने सेठजी के कन्धे पर हाथ रख दिया "शमीम भी चली गई।"

"चली गई! कहाँ चली गई?"

"जयन्त के पास मेरी मर्जी के खिलाफ। उसके बिस्तर पर जयन्त का यह खत मिला है।"

"जयन्त के पास चली गई वह? अनर्थ! प्रलय! वह छोकरा अन्धे प्रेम के वशीभूत होकर अपना सर्वस्व खो बैठा है....

"मैं नहीं चाहता कि हमारी दोस्ती के बीच दुश्मनी की दीवार खड़ी हो! हमें अपनी दोस्ती की खातिर शमीम और जयन्त को अलग करना ही पड़ेगा...."मिर्जासाहब गम्भीर भाव से खड़े थे—"मैं सरकारी नौकर हूँ। आजकल मुझे फुर्सत नहीं...."

"मैं जाऊँगा और उन दोनों दीवानों को पकड़ कर अलग कर दूँगा...चीर दूँगा दोनों की मुहब्बत को दो टुकड़ों में मैं अभी

रवाना होता है। नहीं तो वे दोनों प्रेम के पुतले जलकर राख हो जायेंगे ..."



१६

आज मिसेज बर्मा का जन्म दिवस था। मिल में छुट्टी थी। सब जगह साज-सजावट हो रही थी। झुण्ड के झुण्ड मनुष्य मिसेज वर्मा को बधाई तथा ऊपहार देने के लिए आ रहे थे। मिसेज वर्मा के बंगले पर काफी चहल-पहल थी। जयन्त प्रबन्ध करते करते थक गया था। आज उत्सव का सारा भार उसी पर था। बड़ी लगन के साथ मिसेज वर्मा के अतिथियों का स्वागत कर रहा था।

दिन भर चहल-पहल में ही बीता। रात को मिसेज बर्मा के पेराडाइज होटल में, शहर के बड़े-बड़े रईसों की पार्टी थी। वहा भी पूरा प्रबन्ध किया गया था—जलपान का, खाने-पीने का। सन्ध्या को छः बजते-बजते पैराडाईज होटल मानों स्वर्ग बन गया। शहर के बड़े-बड़े रईसों की मोटरों से सड़क का आवागमन रुक गया। खूब आन्दोत्सव हुआ। नृत्य और गायन का खूब प्रदर्शन हुआ। होटल में खाने-पीने का प्रबन्ध होटल के मैंनेजर ने किया था। अतः जयन्त को यहाँ विशेष कठिनाई नहीं उठानी पड़ी। वह केवल मिसेज वर्मा के साथ साथ आगत सज्जनों के स्वागत में व्यस्त था।

मगर यह आन्दोत्सव भी केवल घण्टे भर के लिए ही था। सात बजते बजते शहर के सभी रईसों ने अपने-अपने घर की राह ली। केवल मिसेज वर्मा के कुछ अन्तरंग मित्र, जिनकी संख्या केवल आठ या दस थीं, होटल में रह गये। अब होटल के प्राइवेट

हाल में एक नई पार्टी का आयोजन होने लगा। जयन्त इस आयोजन से सर्वथा अनभिज्ञ था, फिर भी उसे मिसेज वर्मा के साथ उपस्थित रहना आवश्यक था।

होटल के प्राइवेट हाल में संगमरमर की मेजें लगी हुई थीं। वे लोग उसी के पास जाकर बैठ गये। जयंत भी मिसेज वर्मा के बगल में जा बैठा, मगर उसका मन न जाने क्यों उद्विग्न हुआ जा रहा था। मिसेज वर्मा की इस गुप्त पार्टी का मतलब वह नहीं समझ पा रहा था? उस पार्टी में चार-पाँच औरते तथा इतने ही मर्द थे, मगर किसी की भी भाव-भंगिमा जयन्त को अच्छी नहीं लग रही थी। उसे लग रहा था, जैसे वह आवारों की मण्डली में बैठा है। मिसेज वर्मा के प्रति उसकी जो कुछ सहानुभूति शेष थी, वह आज की हरकतों से जाती रही। घृणा की तीव्र लहर उसके अन्तराल में हिलोरें मारने लगी थी।

और उस समय उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा, जब उसने देखा कि होटल के कई बेयरों ने बोतल में नृत्य करती हुई 'लालपरी' तथा सोडे की बोतलें लाकर मेज पर रख दी। जयन्त ने बोतलों पर चिपके लेबलों को देखा—जानी वाकर, ह्वाइट हार्स पनफेक्शन, ब्लेक ऐण्ड ह्वाईट शराब!—जयन्त कांप उठा। वह उठने लगा।

"बैठो रहो!" मिसेज वर्मा ने आज्ञामिश्रित स्वर में कहा। जयन्त बैठ गया। सब लोग हँस पड़े।

बोतलों के कार्क खुले और शीशे के गिलासों में सोडा एवं शराब का सम्मिश्रण होने लगा। जयन्त चुपचाप कांपता हुआ बैठ रहा। ऐसा लग रहा था उसे, जैसे वह भयानक जानवरों के बीच बैठा हो। उसके ज्ञानतन्तु क्षीण होते जा रहे थे।

पहली गिलास जयन्त के आगे रखी गई, मगर उसने घृणा से मुँह फेर लिया। सब लोग पुनः हँस पड़े। जयन्त क्रोध से दाँत पीसने लगा। मिसेज वर्मा ने धीरे से उसके कान के पास मुँह ले जाकर कहा—"ऐटीकेट सीखो। यह सिर्फ डिस्टिल्ड वाटर है और कुछ नहीं।"

जानते हुए भी जयन्त कुछ न बोला। वह हत-बुद्धि-सा हो गया था। उसकी आँखों के सामने अँधेरा छा रहा था। मिसेज वर्मा ने उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया और रुक्ष स्वर में बोली—"सेक्रेटरी, इतने आदमियों के सामने तुम मेरा अपमान कर रहे हो तुम भूल जा रहे हो कि तुम मेरे सेक्रेटरी हो—मेरे गुलाम।" आखिरी शब्द कहते समय मिसेज वर्मा के मुख पर एक क्रूर रेखा स्पष्ट हो आई—"तुम अपनी इच्छानुसार नहीं चल सकते। तुम मेरा नमक खाते हो—मेरी आज्ञा का उल्लंघन नहीं कर सकते!"

नौकर? उफ! कितना विभिषिकापूर्ण शब्द है यह? धिक्कार है उन युवकों पर जो दस बीस रुपयों के लिए दूसरों के गुलाम बनते हैं। अपना दिल-दिमाग, हाड़-मांस और अपना सुख-चैन बेच देते हैं, कौड़ियों के मोल। दूसरों के हाथ के कठपुतले बन जाते हैं वे। आधा पेट खाना अच्छा, मगर नौकरी करनी अच्छी नहीं वह उद्विग्न होकर उठ खड़ा हुआ।

मिसेज वर्मा ने उसका हाथ पकड़कर जबरदस्ती बैठा दिया और अपने सुकोमल हाथ से गिलास उठाकर जयन्त के मुँह से लगा दिया। मिसेज वर्मा के बहुत विश्वास दिलाने पर कि जो वह दे रही है केवल सोडा वाटर है, वह अस्वीकार न कर सका। मुख से लगा लिया गिलास उसने! दूसरे क्षण वह गले के नीचे उत्तर गया।

बहुत देर तक मदिरा का ताण्डव होता रहा। अन्त में मिसेज वर्मा उठ खड़ी हुईं और जयन्त का हाथ पकड़कर होटल के अपने खास कमरे में चली गईं। कमरा अत्यन्त सुसज्जित था। एक गद्देदार पलंग बिछी थी। मिसेज वर्मा उसी पलग पर जाकर बैठ गईं और जयन्त से कहा—"बैठो मिस्टर जयन्त !"

"बैठूं ?...." जयन्त इस समय अपनी सुध-बुध खो बैठा था। झूम रहा था बेहोशी से—"कहाँ बैठूं, किसके दिल में बैठूं ? यहाँ तो एक भी दिल दिखाई नहीं देता ?"

"मेरे ही दिल में बैठो न !...." मिसेज वर्मा ने भी अधिक पी ली थी, मगर उसके होश-हवास दुरुस्त थे।

जयन्त उसके पास बैठ गया—"तुम....तुम कौन हो ....उसने मिसेज वर्मा के चमकते हुए चेहरे पर अपने नेत्र गड़ा दिये—"कौन हो तुम ? 'वह' नही हो ?"

"वह कौन, मिस्टर जयन्त ?...." मिसेज वर्मा उसके एकदम पास आ रही।

"तुम नहीं जानती उसे ?..." जयन्त नशे की झोंक में हंस पड़ा—"तुम जान ही कैसे सकती हो ? वह तो मेरे दिल में बसी है। बाहर तो नहीं कि तुम देख सको।"

"मिस्टर जयन्त !....मिसेज वर्मा पर वासना नृत्य कर रही थी—"तुमने कभी किसी को प्यार किया है ? किसी के साथ अपने हृदय का सोदा किया है ? किसी पर प्रेम की दृष्टि डाली है ?...." और मिसेज वर्मा जयन्त की गोद में लेट गईं।

"मैंने केवल उसे ही प्यार किया है...." जयन्त का मस्तिष्क ठिकाने न था—"तुम्हीं ही वह—तुम्हीं मेरी...." नशे में जयन्त को लगा जैसे उसकी गोद में मिसेज वर्मा नहीं, शमीम लेटी हो उसने उसे हृदय से लगा लिया और उन्मत्त की भांति

उसके आरक्त कपोलों पर वासना की मुहर लगा दी। बोला—"सच कहता हूँ डार्लिंग ! तुम्हें चाहता हूँ, प्यार करता हूँ..."

कई घण्टे की यात्रा के बाद जिस समय शमीम कानपुर स्टेशन पर उतरी, उस समय भी उसका मन उद्विग्न था। उसके हृदय में न जाने कैसी एक बेचैनी-सी व्याप्त थी। गाड़ी से उतरते ही उसने पहले शिराज की खोज की, क्योंकि उसे डर था कि कहीं बह उसे फिर परेशान न करे। मगर वह कही दीखाई न पड़ा शमीम ने एक टेक्सी भाड़े पर की और ड्राइबर को 'दी कानपुर स्पिनिंग एण्ड वीविंग मिल्स' के आफिस तक पहुँचा देने को कहा।

सन्ध्या हो गई थी जब की वह मिल की विशाल अट्टालिका के पास पहुँची। वहाँ की सजावट देखकर उसने अनुमान लगाया कि शायद कोई जलसा हो रहा है, परन्तु चपरासी से पूछने पर पता लगा कि इस समय वहाँ न तो मिसेज वर्मा ही माजूद है और न उनके प्राइवेट सेक्रेटरी साहब ही सब लोग पैराडाइज होटल गये हैं वहाँ मिसेज वर्मा के जन्म-दिसव के उपलक्ष में पार्टी है।

चपरासी से होटल का पता पूछकर शमीम उसी टेक्सी पर पुनः सवार हो गई। जिस समय वह पेराडाइज होटल में पहुँची, उस समय रात के साढ़े आठ बज चुके थे। वहाँ के वातावरण से शमीम घबड़ा उठी। वह लपकती हुई होटल के मैनेजर के पास आई। मैनेजर ने उसे एक बार ध्यानपूर्वक देखा, फिर बोला—"पर्टी तो समाप्त हो चुकी है ! आप अब सम्मिलित नहीं हो सकती !...."

"मैं पार्टी में शरीक होने नहीं आई हूँ, मैं सिर्फ मिसेज वर्मा के प्राइवेट सेक्रेटरी साहब से मिलना चाहती हूँ...." शमीम ने कहा।

"वे बिजी हैं....अफसोस ! आप नहीं मिल सकती उनसे।"

"काम बहुत जरूरी है...."

"बहुत जरूरी है ?...." मैनेजर के स्वर में व्यंग था और होठों पर क्रूर हँसी—"आप उस कमरे तक जा सकती हैं, मगर डिस्टर्ब न कीजियेगा, छिद्र से भीतर का दृश्य देखकर सन्तोष कर लीजियेगा। इस समय मिस्टर जयन्त, मिसेज वर्मा के साथ बिजी हैं...."

शमीम एकदम घबरा गई थी। लोगों की बातचीत एवं उस जगह के वातावरण से वह भयभीत-सी हो उठी थी। उसके मस्तिष्क में यह बात नहीं आ रही थी कि आखिर मामला क्या है? वास्तविकता किस ओर है? मैनेजर ने संकेत से जीने पर का एक कमरा दिखा दिया। शमीम काँपते हुए पैरों से सीढ़ियाँ चढ़कर उस कमरे के सामने पहुँची, जिसके किवाड़ मामूली ढंग से भिड़काये हुए थे। भीतर से बातचीत की आवाज आ रही थी।

शमीम का बुरा हाल था। न जाने किस भावी आशंका से उसके अवयव शिथिल पड़ते जा रहे थे। धड़कते हुए हृदय से उस बन्द दरवाजे के सामने जाकर खड़ी हो गई वह, और भीतर की बातचीत सुनने का प्रयत्न करने लगी। ठीक उसी समय जयन्त नशे की झोंक में मिसेज वर्मा को शमीम का प्रतिरूप जानकर कह रहा था—"सच कहता हूँ डार्लिङ्ग ! मैं तुम्हें चाहता हूँ, तुम्हें प्यार करता हूँ, दुनियाँ की कोई भी शक्ति मुझे तुमसे अलग नहीं कर सकती....तुम मेरी हो,"

आह ! ये ही शब्द थे जिसे उसने एक दिन शमीम के लिए कहा था। शमीम के पैरों तले से जैसे पृथ्वी खिसकती प्रतीत हुई—उफ् ! उसका प्रियतम, उसका मालिक, जिसके लिए वह खाना-पीना छोड़कर इतनी दूर दौड़ी आई, आखिरकार विश्वासघाती निकला। शमीम ने द्वार के छिद्र से भीतर की ओर झांका। उसने

देखा—एक परम सुन्दरी युवती जयन्त की गोद में लेटी हुई जयन्त की वासना को उभारने का लज्जाजनक प्रयत्न कर रही है।

शमीम ने उद्वेग से अपनी दोनों आँखें मूँद ली। उसका हृदय धू-धू कर जल उठा। वह मूर्छित होकर गिर जाती, यदि किसी के मुलायम हाथों ने उसे सम्हाल न लिया होता। कई मिनट तक शमीम अपनी सुध भूली रही। जब उसे चेतना हुई तो एकाएक वह चौंक पड़ी। उसने देखा—वह एक आलीशान कमरे में एक गद्देदार पलंग पर लेटी हुई है और उसके सामने खड़ा हुआ जो व्यक्ति तन्मयतापूर्वक उसके होश में आने की प्रतीक्षा कर रहा है, वह और कोई नहीं, शिराज था।

क्रोध से काँप उठी शमीम मगर शिराज ने उसे उठने नहीं दिया—"लेटी रहें आप। तकलीफ होगी..."

"मैं यहाँ कैसे आ गई?...."

"बेहोशी के हालत में आपको मैं उठा लाया हूँ... आप होटल के ही कमरे में हैं। मैं यही ठहरा हूँ.." कहते हुए शिराज ने आगे बढ़कर कमरे का दरवाजा भीतर से बन्द कर लिया। शमीम शंका से भयभीत हो उठी! शिराज कन्धे हिलाता हुआ उसके पलंग तक चला आया—"देखा आपने?..." वह कहने लगा-"जयन्त की आवारागर्दी हद के बाहर हो गई है, है न! ...और मुझे सख्त अफसोस है कि अब भी आप उसे चाहती हैं। देखिये, मिस शमीम! जरा आइने में अपनी सूरत देखिये। आप उसके लिए इतनी दूर तकलीफ सहती हुई आई, मगर वह बेवफा निकला—उसने आपके साथ दगा की, मिस समीम!"

"चुप रहिये, आप! उनके खिलाफ कोई बद-अल्फाज मुंह से न निकालिये। मिहरबानी करके मुझे जाने दीजिये...."

"मिस शमीम ! आँख रखते हुए भी आप उसकी नाफरमानी नहीं देखना चाहती, कान रहते हुए आप उस दगाबाज की बद-हरकतों की कहानी सुनना नहीं चाहती - इधर देखिये मिस शमीम ! मुझे देखिये ! मैंने आपके लिए कितनी तकलीफें उठाई, आपके आराम का कितना ख्याल रखा—मगर वह, जिसे आप चाहती हैं, जिसके दिल पर आप भरोसा रखती हैं आपके साथ कैसा जुल्म कर रहा है ? किस तरह आपके रहते हुए दूसरी औरत पर बद-निगाह डाल रहा है...."

"मिहरबानी करके आप अपना मुंह बंद रखिये ! मैं उनके खिलाफ ऐसे अल्फाज नहीं सुन सकती...."

"क्यों नहीं सुन सकती, मिस शमीम !—इसलिए कि आप अब भी उस नाकाबिल छोकरे को मुहब्बत की नजर से देखती हैं, अब भी आप उसकी बदजातियों की तरफ से आँख मूँदकर उसी पर अपना कीमती दिल निछावर कर रहीं है—सच कहता हूँ मिस शमीम ! जिस वक्त मैं होटल में आया और मैंने उसका फरेब देखा मेरा जिगर जल उठा। एक बेबस लड़की के साथ, ऐसी बदएतबारी कर रहा है—मगर मेरा दिल मसोस कर रह गया, यह सोचकर कि कहीं मैं कुछ कर गुजरा तो आप को दिली सदमा पहुँचेगा। आप यकीन रखें, मिस शमीम ! वह आपको नहीं चाहता, वह आपको खिलौना समझता है, तितली समझता है..." उत्तेजना से शिराज का मुख लाल हो गया।

"ऐसा न कहिये, न कहिये !...." दौड़कर शमीम ने शिराज का मुंह अपने हाथों से बन्द कर दिया और फूट-फूटकर रो पड़ी। इस समय शिराज की बातों ने उसके दिल में तूफान-सा मचा दिया था। उसने जयन्त का बिश्वासघात स्वयं अपनी आँखों से

देखा था, फिर क्यों न उसके हृदय में शिराज की बातें सुनकर तूफान उठता ? वह क्यों न फूट-फूट कर रोती अपनी किस्मत पर !

"मिस शमीम !"

"क्यों जले पर नमक छिड़क रहे हैं आप, मिस्टर शिराज ?"

शमीम की आँखों से अविरल अश्रुधारा प्रवाहित हो रही थी—मैं जानती हूँ...जानती हूँ कि उनके दिल ने मेरे दिल से बगावत कर दी है, मैं जानती हूँ कि नके जिस्म पर अब दूसरे जिस्म का दखल हो गया है—सब जानती हूँ, मगर क्या करूं... क्या करूं ? मिस्टर शिराज ! मुझे जाने दीजिये—मैं जाकर कहीं डूब मरूंगी। मैं जिन्दा नहीं रहना चाहती। किसके लिए जिन्दा रहूँ अब !"

"आपकी तबियत खराब है। आप रात भर इस कमरे में आराम करें। सुबह जो होगा, वह देखा जायगा। बगल वाला कमरा भी मैंने ले लिया है ! मैं उसी में सो रहूँगा..." शिराज ने कहा—"मुझे देखिए, मिस शमीम !...मैं आपकी खिदमत करने के लिए तहेदिल से तैयार हूँ ! आप यकीन रखें। मेरे खून का हर एक कतरा, मेरे बदन का हर एक जर्रा, आपके कदमों पर निसार होने का तैयार है...मुझे आपका डर है, मिस शमीम ! नहीं तो मैं उस दगाबाज को बोटी-बोटी काटकर चील-कौओं के आगे फेंक देता....मैं आपके लिए सब कुछ कर सकता हूँ..."

"शुक्रिया...." शमीम ने व्यंग किया।

पर व्यंग की परवाह न कर, वह बोल गया—

"मुझे अफसोस है कि अभी तक मुझे आपकी कोई खिदमत करने की खुशकिस्मती हासिल नहीं हुई—शायद आप मुझे ऐसा मौका देना नहीं चाहती...आप नहीं जानतीं, मिस शमीम..." शिराज कुछ हिचकिचाया—"कि मेरे दिल में आपके लिए कितनी

इज्जत, कितनी हमदर्दी है ! आप सच मानें, दुनिया में मुझसे ज्यादा आपका हमदर्द शायद ही कोई हो। आप सुनकर ताज्जुब करेंगी, मिस शमीम..." शिराज दरवाजे की तरफ बढ़ा—"कि मैं आपको बहुत चाहता हूँ...." उसने कन्धे हिलाये, फिर दरवाजा खोलता हुआ बोला—"इतना चाहता हूँ कि दुनिया की कीमती चीज भी उसके मुकाबले में तुफ् है।" और वह अपनें पेटेण्ट मूड में बोलता हुआ कमरे के बाहर हो गया।

शमीम पर जैसे वज्र गिर पड़ा ! उफ ! यह युवक उसके साथ इतनी हमदर्दी, इतनी आत्मीयता इसलिए दिखा रहा था कि वह उसे चाहता है, उसके दिल में उनके लिए नापाक मुहब्बत है।

●

१७

पलक मात्र में क्या से क्या हो गया। कल रात जो शहर शान्ति की गोद में सुख की नींद सो रहा था, वही प्रातःकाल होते ही भयानक क्रन्दन में परिवर्तित हो गया। गली-गली में सड़क-सड़क पर त्राहि-त्राहि मच गई। दंगे ने इतना बिकराल रूप धारण कर लिया कि पुलिस प्रबन्ध करनें में असमर्थ हो रही थी। हिन्दू-मुसलमान, दोनों एक ही भारत माता की गोद में जन्मे और पले भाई-भाई होते हुए भी एक दूसरे के रक्त के प्यासे हो गये थे, निर्दयतापूर्वक एक दूसरे का जान ले रहे थे। झुन्ड के झुन्ड हिन्दू, समूह के समूह मुसलमान, अस्त्र लेकर निकल पड़े थे। निरपराधों की जानें गई, गरीबों के रक्त से पृथ्वी लाल हो गई, लोहे के काले हथियार रक्त-रंजित लालिमा से चमक उठे।

पुलिस ने गोली चलाई, कार्फ्यू आर्डर जारी किया, मगर सब व्यर्थ ? दंगे की भयानकता सम्हाले न सम्हली। उसका

वेग तीव्र गति से बढ़ता ही गया और कुछ ही घण्टों में सपूर्ण कानपुर शहर श्मशानवत् दृष्टिगोचर होने लगा। धर्मान्धों ने, मजहबपरस्तों ने, कितने ही घरो को बर्बाद कर दिया—हाहाकार मचा दिया उन्होंने चारों ओर

* * *

पुत्र-प्रेम एवं हार्दिक क्रोध से व्याकुल होकर सेठ केशवराव, हाथ में एक अटैची लटकाये जिस समय कानपुर स्टेशन पर उतरे उस समय वहाँ का रंग-ढंग देखकर उनके आश्चर्य का पारावार न रहा। जगह-जगह आर्म्ड पुलिस के दस्ते तैनात थे। सभी के मुंह पर एक प्रकार की व्यग्रता छाई हुइ थी। शीघ्रता के साथ दौड़ते पुलिस एवं रेलवे आफिसर प्रबन्ध करने में तल्लीन थे।

"आप शहर नहीं जा सकते....रायट हो गया है..." एक पुलिस आफिसर ने सेठ केशवराव से कहा।

"रायट दंगा...." सेठ जी को आश्चर्य हुआ, साथ ही क्रोध भी—"मगर मेरा काम आवश्यक है—जाना हो होगा मुझे!"

"कर्फ्यू आर्डर है—जा नहीं सकते ?"

इस समय उनके हृदय में असीम क्रोध भड़क रहा था। उनका लड़का पथभ्रष्ट हो रहा होगा, अपना धर्म गंवा रहा होगा और वे परिस्थिति के वशीभूत होकर उसके पास जा नहीं सकते! उसे पतित होने से बचा नहीं सकते!

बहुत प्रयत्न करने पर, काफी रुपया व्यय किये जाने पर उन्हें कुछ आर्म्ड पुलिस एवं एक टैक्सी मिली। वे तुरन्त 'दि कानपुर स्पिनिंग एण्ड वीविंग मिल्स' की विशाल इमारत के पास जा पहुँचे मिल में भी पूरा पहरा था। मिसेज वर्मा उस समय मिल के हाते में बने हुए बंगले में थीं।

प्रातः काल नौ बजे थे, जब कि सेठ केशवराव मिसेज वर्मा के

बंगले पर पहुँचे। उस समय उनके मुखमण्डल पर उद्विग्नता व्याप्त थी! वे टैक्सी से कूद पड़े और अपने हाथ की छड़ी को घुमाते हुए बंगले के भीतर की ओर बढ़ चले, मगर चपरासी ने उन्हें रोका—"आप भीतर नहीं जा सकते?"

"क्यों?...आखिर क्यों?...." सेठ केशवराव की मुखाकृति क्रोध से रक्ताक्त हो गई।

"मैडम कार्यव्यस्त हैं। एक घण्टे तक उनसे भेंट न हो सकेगी। आप वेटिंग रूम में बैठ सकते हैं..."

"मेरा एक-एक क्षण बहुमूल्य है। उनसे कहो, मुझे एक बहुत आवश्यक कार्य से अभी तुरन्त मिलना है..."

"आप नहीं मिल सकते!...."

"नहीं मिल सकता?..." गरज पड़े सेठजी—"सेठ केशवराव को रोकने की शक्ति है, तुझमें?" दूसरे ही क्षण सेठजी की वह पतली-सी छड़ी चपरासी की पीठ पर सट्ट से जा पड़ी। एक हल्की चीत्कार छोड़ कर वह चुप रह गया। सेठ केशवराव का नाम सुन-कर ही वह अवाक हो गया था!

सेठजी लपकते हुए भीतर आये। मिसेज वर्मा मेज के पास बैठी हुई कुछ पत्रादि देख रही थीं। सेठजी ने दरवाजे पर से पूछा—"क्या मैं अन्दर आ सकता हूँ?..." उनके स्वर में रूखा-पन था।

"नो!...." मिसेज वर्मा ने सर नीचा किये हुए ही कह दिया,,

"क्षमा कीजियेगा, मिसेज वर्मा ..." सेठजी कहकर भीतर चले आये। मिसेज वर्मा ने तमतमाये हुए चेहरे से आँखें उठाकर ऊपर देखा। मगर उसके चेहरे पर की तमतमाहट दूसरे ही क्षण विलीन हो गयी, यह देखकर कि उसके सामने क्रोधपूर्ण मुद्रा में एक सभ्य पुरुष खड़ा है।

"आपके चपरासी बड़े अशिष्ट हैं...." सेठजी ने कहा—"मैं सेठ केशवराव हूँ। कदाचित आपने मेरा नाम सुना होगा ?...."

"सेठ केशवराव ?" मिसेज वर्मा के मुख से आश्चर्यमिश्रित शब्द निकल पड़े। उन्हें बिश्वास न हुआ कि प्रसिद्धिप्राप्त सेठ इस प्रकार सबेरे-सबेरे, अस्त-व्यस्त अवस्था में उसके पास आयेंगे—"आप ही हैं सेठ केशवराव ?"

"जी हाँ ! मैं ही हूँ...." एकाएक सेठ जी का पारा चढ़ गया। जितनी देर हो रही थी, उतना ही उनके हृदय की उद्विग्नता बढ़ती जा रही थी—"मैं पूछता हूँ मिसेज वर्मा ! जयन्त कहाँ है ?"

"मिस्टर जयन्त कुमार !..."

"हाँ हाँ, जयन्त !....आपका प्राइवेट सेक्रेटरी जयन्त ! मेरा बेटा जयन्त !"

"मिस्टर जयन्त कुमार आपके बेटे हैं ?...." मिसेज वर्मा ने विस्फारित नेत्रों से उनकी ओर देखा—"आपके बेटे !..." उन्हें स्वप्न में भी विश्वास नहीं था कि दयनीय अवस्था में उनके पास आने वाला वह नवयुवक भिखारी, और कोई नहीं, सेठ केवराव का बेटा होगा। आज उन्हें मालूम हो गया कि जयन्त में इतनी व्यापारिक योग्यता कहाँ से आई थी ?

"आप बताती नहीं, व्यर्थ मेरा समय नष्ट कर रही हैं। वह बरबाद हो जायगा....आप सच मानिये, अगर मुझे थोड़ा भी विलम्ब हुआ तो वह पथभ्रष्ट हो जायगा...."

"वे यहाँ नहीं हैं, अपने निवास पर होंगे...." मिसेज वर्मा जयन्त के निवास का पता लिखकर दे दिया। सेठ केशवराव शीघ्रता के साथ बाहर की ओर लपके। मिसेज वर्मा आश्चर्य-

चकित-सी खड़ी रही, यह सोचती हुई कि अवश्य कोई गम्भीर बात है।

* * *

प्रातः काल जब जयन्त सोकर उठा, तो उसका रग-रग टूट रहा था, सिर भारी था, शरीर में बेहद पीड़ा थी। उसने नौकर को चाय लाने को आज्ञा दी और आप कुर्सी पर बैठ कर गतरात्रि की घटनाओं पर बिचार करने लगा। पार्टी में उसे सुरा पिलाई गई थी, फिर मिसेज वर्मा उसे लेकर अपने प्राइवेट कमरे में गई थी, इसके बाद न जाने क्या-क्या हुआ था—सोचते-सोचते जयन्त का हृदय क्रोध एवं घृणा से भर गया। मिसेज वर्मा के विषय ने उनकी जो धारणा बन गई थी, ठीक वैसा ही उसने पाया। उसे इस बात से आश्चर्य हुआ कि विलाशिता और शराब में डूबी रहने पर भी समाज में उसको धाक है उसका मांन है।

और वह ! जिसने कभी बुरा काम नहीं किया, जिसने शमीम के सिवा अन्य किसी स्त्री पर कुदृष्टि नहीं डाली—उसे समाज के क्षुद्र जीवों ने, जगत के अधम प्राणियों ने आवारा कहा और उसका अपमान करने से, उसे उजाड़ देने में कोई कसर बाकी नहीं रखी। अन्यायी समाज।

उफ ! वह मिसेज वर्मा का नौकर है, एक पतित स्त्री का गुलाम है ?—जयन्त का अन्तस्थल हाहाकार कर उठा। उसका हृदय मिसेज वर्मा के प्रति अशीम घृणा से भर गया। उसकी मुखाकृति क्रोध से रक्तात्त हो उठी। वह सोचने लगा—श्वेत वस्त्रों में काला हृदय छिपाये हुए सदाचार की ओट में दुराचार का बाना पहने हुए इस अधम नारी की गुलामी करना, अपने आपको पतित बना देना है। यह नहीं करेगा उसकी नौकरी ? वह नहीं देखेगा उसका 'विष-रस भरा कनक घट' जैसा मुख ! अब उसके

पास रुपया है, वह कोई दूसरा काम करके अपना जीवन निर्वाह करेगा।

मगर शमीम ! उफ् ! शमीम ने उसके पत्र का उत्तर तक नहीं दिया—आखिर मेरी ओर से इतनी अन्यमनस्क क्यों हो गई वह ? क्यों भूल गई वह अपने अभागे जयन्त को, जो केवल उसके लिए अपनी सारी मर्यादा त्याग कर भिखारी बना...जिसने लोगों की गालियाँ सहीं, सभ्य कहलाने वाले समाज के कीड़ों के पद-प्रहार सहन किये, ठोकरें खाईं।

"साहब !...." नौकर ने चाय मेज पर रखते हुए कहा—"शहर में भारी दंगा हो गया है..."

"दंगा ?..." चौंक पड़ा जयन्त—"मगर मुझे जाना ही पड़ेगा। चाय ले जाओ, मैं नहीं पीयूँगा। दौड़कर एक टैक्सी बुला लो..."

"मगर जाना कहाँ चाहते हैं आप ?"

"आफिस जाना चाहता हूँ ! चार्ज देकर स्वतन्त्र होना चाहता हूँ। मै नहीं करना चाहता उसकी नौकरी..."

"टैक्सी नहीं मिलेगी, साहब ! परिस्थिति भयंकर है। आप जाने का विचार छोड़ दें...."

"जाना आवश्यक है...." जयन्त ने खूँटी पर से अपना कोट उतार कर पहना—"तुम मेरी साईकिल बाहर कर दो..."

"बाहर न जाइये साहब ! सारे शहर पर खून सवार है। खून से होली खेली जा रही है। कही कुछ हो गया तो...."

"तुम जाओ ?" गरज पड़ा जयन्त। इस समय वह पूर्णतया विक्षिप्त हो उठा था। वह मिसेज वर्मा की नौकरी से इसी समय इस्तीफा देना चाहता था। एक मिनट के लिए भी अब सहन नहीं कर सकता था कि वह मिसेज वर्मा का नौकर रहे। उसके हृदय

में ध्वंसक संघर्ष मचा हुआ था। गत रात्रि को मिसेज वर्मा के कुत्सित कार्य से उसका हृदय प्रज्वलित हो रहा था।

उसने जल्दी-जल्दी अपना सूट पहना, बाहर आकर साइकिल पर सवार हुआ। नौकर के हजार मना करते रहने पर भी, यह कहते हुए कि कोई आये तो उसे बैठने को कह देना' उसने साइकिल भगा दी।

मिसेज वर्मा अभी तक अपने कमरे में बैठी हुई वही पत्र देख रही थीं जो थोड़ी देर पहले सेठ केशवराव के आने पर देखने में तल्लीन थी। एकाएक उनके मुख से आश्चर्य एवं भय की एक चीख निकल पड़ी, जब उन्हों ने देखा कि उनका सहकारी दरवाजे पर खड़ा है—उसका सूट जगह-जगह से फट गया है, सर से रक्त की धारा बह रही है—शरीर पर कई जगह चोट के चिह्न दिखाई पड़ रहे हैं, चेहरा पीला पड़ा हुआ है।

"सेक्रेटरी ?...." उन्हों ने पुकारा, मगर हमेशा की भांति जयन्त ने 'यस मैडम' कहकर उत्तर नहीं दिया। वह स्थिर प्रस्तर-वत खड़ा रहा।

"यह तुम्हारी क्या दशा है, सेक्रेटरी ?"

"मिसेज वर्मा !..." जयन्त ने रुक्ष स्वर में कहा। मिसेज वर्मा को पहली बार घोर आश्चर्य हुआ उसके मुख से अपना नाम सुनकर—"मैं नौकरी से..."

"मगर तुम्हारी यह दुर्दशा कैसे हुई ?"

"यह दंगे का अभिशाप है—धर्म के पीछे अन्धी भेड़ों की तरह आचरण करने वालों की निशानी है यह...." कहकर जयन्त सूखी हंसी हंस पड़ा।

"या ईश्वर ! ऐसे समय तुम घर से बाहर क्यों निकले ? क्यों निकले ? ...बोलो ? किसने तुम्हें ऐसी राय दी ?"

"मेरे हृदय ने । मैं आपकी नौकरी से स्तीफा देने आया हूँ...."

"इस्तीफा ?...." मिसेज वर्मा अपनी कुर्सी छोड़ उठ खड़ी हुई—"क्यों इस्तीफा देना चाहते हो, सेक्रेटरी ?"

"सेक्रेटरी मत कहिये ! मुझे आपकी नौकरी पसन्द नहीं, आप अपना चार्ज ले लीजिये ।"

कुछ क्षण भर दोनों चुप रहे, फिर मिसेज वर्मा ने आगे बढ़ कर जयन्त का हाथ पकड़ लिया—"तुम अप्रन्न हो गये ?" उन्हों ने कहा—"कल का मेरा आचरण तुम्हें पसन्द नहीं आया ? मैं क्षमा चाहती हूँ...." फिर थोड़ा रुक कर बोली—"तुम्हारे पिता अभी-अभी आये थे ? तुम्हारे निवास पर गये हैं—और तुम यहाँ ...."

"...." जयन्त चुप रहा ।

"अपनी दशा जरा देखो, चलो कपड़े बदल कर थोड़ा विश्राम कर लो...."

"मैं जा रहा हूँ...."

"ऐसी भयानक स्थिति में कहाँ जा रहे हो—कहाँ जाना चाहते हो ? न जाओ सेक्रेटरी ! मैं कहती हूँ, न जाओ, मेरा विचार कर...."

"मैं आपका गुलाम नहीं...."जयन्त द्वार की ओर बढ़ा ।

"सेक्रेटरी ?" मिसेज वर्मा ने आगे बढ़कर जयन्त को अपने बहुपाश में कश लिया—"न जाओ सेक्रेटरी ! मुझे देखो ! मैं तुम्हें...." मगर जयन्त ने उन्हें दूर ढ़केल दिया । मिसेज वर्मा अश्रुप्लावित नेत्रों से अपने सेक्रेटरी की ओर देखती हुई बोली—"तुम जाना ही चाहते हो तो जाओ, मैं मोटर का प्रबन्ध किये

देती हूँ....''मगर जयन्त ने उनकी एक न सुनी और पैर पटकता हुआ कमरे से बाहर निकल गया।

* * * *

"ऐसे वक्त होटल के कमरे से बाहर निकलना ठीक नहीं। बाहर दंगे का जोर कम नहीं हुआ है। लोग खतरे में पड़ जायेंगे...." शिराज ने कहा।

"ऐसा न कहिये। मेरे दिल पर जो बीत रही है, वह आप नहीं समझ सकते...."शमीम बोली—'मैं उनसे एक बार जरूर भेंट करूंगी—इसी वक्त ! उनके पास चलकर उनसे पूछूंगी कि आखिर मेरे साथ दगा करने का सबब क्या है ? मेरी बसी-बसाई दुनिया उजाड़ देने की वजह क्या ?..."

"आप अभी तक उस दगाबाज को भूल न सकी—अपने दिल से उसकी नापाक सूरत निकाल न सकी ? अफसोस है...." शिराज के मुंह पर घृणा के भाव लक्षित हो उठे—"जिसने आपके साथ छल किया, आपकी इज्जत को ठोकर मारी, उसी से अब भी चिपकी रहना चाहतीं है ?"

"मुझपर रहम कीजिए। जाने दीजिये मुझे .." शमीम की आंखें भर आई—"मेरे दिल में लगी हुई आग ऐसे नहीं बुझ सकती, मिस्टर शिराज ! वह मेरी जान ही लेकर रहेगी। आखिरी बार मैं उनसे मिलना चाहती हूँ। उनके कदमों पर मैं अपना सिर रखकर मरना चाहतीं हूँ...."

"मैं आपको जाने नहीं दे सकता, मिस शमीम ! इस समय दंगा अपनी जवानी पर है..."

"आप मुझे रोक नहीं सकते !...." शमीम के चेहरे पर क्रोध की लालिमा नृत्य कर उठी—"हरगिज नहीं रोक सकते आप ? आपका मुझ पर कोई हक नहीं, मिस्टर शिराज ! आप मुझे फजूल

परेशान कर रहे हैं। खुदा कसम! मुझे जाने दीजिए, मुझ पर जुल्म न कीजिए...." कहते कहते शमीम भावावेष में एकदम रो पड़ी!

"अफसोस!..." शिराज ने एक ठन्डी साँस ली—"आप अब भी मुझे समझ न सकीं, मेरे दिल को परख न सकीं। आप जाना ही चाहती हैं, तो चलिए। शुरू से ही आपका साथ देता आ रहा हूँ इस वक्त अकेली कैसे छोड़ सकता हूँ..." किसी प्रकार होटल के मैनेजर के प्रबन्ध से एक टैक्सी पर शिराज और मिस शमीम जयन्त के निवास पर आये। नौकर से पूछने पर मालूम हुआ कि जयन्त दो ही मिनट पहले मिसेज वर्मा के बंगले पर गये हैं। शमीम घबरा उठी—ऐसी भयानक स्थिति में वह केवल साइकिल पर गये हैं? उसका कलेजा धड़क उठा। शिराज ने उसे समझाया। दोनों जयन्त के कमरे में आकर बैठ गये और उसके लौटने की प्रतीक्षा करने लगे।

"आप जयन्त का ख्याल छोड़ दीजिए। वह आपके काबिल नहीं। उसे अपना दोस्त कहने में मुझे शर्म महसूस होने लगी है—वह नालायक है...." शिराज ने कहा।

"ऐसा न कहिये—ऐसे बद-अलफाज मुँह से न निकालिए वे चाहे अच्छे हैं या बुरे, मेरे खुदा हैं। एक बार मेरे सामने आ जाँय और मुझे प्यार की आवाज में पुकारें शमीम—और मैं सब कुछ भूल कर उनके कदमों पर गिर पड़ूँ—यही मेरी आरजू है, यही मेरी तमन्ना है...."

"आप नादानी करती जा रही हैं...उसकी बद-एतवारी देखते हुए भी आप भूल जाना चाहती हैं कि वह बदकार नहीं। उसने आपके दिल पर बिजली गिराई, उसने आपकी मुहब्बत के साथ मजाक किया, उसने आपकी इज्जत के साथ खिलवाड़ किया-सच कहता हूँ, मिस शमीम! वह गोली मार देने के काबिल है"

"मैं उन्हें माफ कर दूँगी...."

"मगर मैं तुम्हें माफ नहीं कर सकता..." दरवाजे से आवाज आई। दोनों ने चौंक कर देखा-देखा सेठ केशवराव क्रोध से उदीप्त भंगिमा लिए खड़े हैं—"तुमने मेरा घर उजाड़ दिया। मेरे

प्यारे इकलौते बेटे पर अपने रूप का जादू चलाकर तुमने मेरा हरा-भरा संसार नष्ट-भ्रष्ट कर डाला। अपनी मुहब्बत का सब्ज बाग दिखाकर तुमने जयन्त को बरबादी के रास्ते पर चलने के लिए मजबूर कर दिया।

"जबान को काबू में रखिये, सेठजी ?" शिराज चिल्लाया।

"तुम चुप रहो !..." गरज पड़े सेठजी। पाँव बढ़ाकर वे शिराज के सामने आ गये—"मैं तुमसे बात नहीं कर रहा हूँ...."

शिराज चुप हो रहा। सेठजी कहते गये "तुम्हारी मुहब्बत में पड़कर उसने पिता के साथ बगावत की, समाज के साथ विद्रोह किया, धर्म की अवहेलना की। तुम्हारे प्रेम के कारण उसने घर-द्वार छोड़ा, भिखारी बना, लोगों के जूते सहे-नहीं तो किसकी मजाल थी कि सेठ केशवराव के बेटे की ओर कोई उँगली भी उठा सकता। आँखें फोड़ देता उसकी जो मेरे बेटे की ओर आँख उठाता। मगर तुमने तो उसे तबाह कर दिया..."

"हमारी मुहब्बत पाक है, बाबूजी ?" शमीम अवसाद पूर्ण स्वर में बोली।

"कभी नहीं ?" उबल पड़े सेठजी—"जिस प्रेम को धर्म, समाज दुनिया हेय कहे, वह पाक मुहब्बत नहीं हो सकती...."

शमीम चुप थी। शिराज दांत पीस रहा था।

"मगर तुम्हारी यह प्रलयंकारी आकांक्षा पूर्ण न हो सकेगी। सेठ केशवराव इस प्रकार अपनी पराजय स्वीकार नहीं कर सकते !....जयन्त में इतनी ताकत नहीं कि वह मेरी आज्ञा का उल्लंघन कर सके। जिस समय मेरा कठोर गर्जन—जयन्त तू पथभ्रष्ट हो रहा है, पतित हो रहा है, आ ! मेरे पास आ !—उसके कानों में पड़ेगा, तो देखना, वह तुम्हें छोड़कर, तुम्हारी मुहब्बत पर लात मारकर मेरे पास दौड़ा आयेगा—इतनी शक्ति है सेठ केशवराव में...."

"दया !"—रो पड़ी शमीम।

"क्या चाहती हो ?..." सेठजी का मुख कठोर हो गया—"इस क्षुद्र प्रेम के लिए दया मेरे पास नहीं है, न मैं कर ही सकता

हूँ। मैं नहीं देख सकता कि मेरा बेटा तुमसे नेह लगाये, तुम्हारे साथ शादी कर मुझे छोड़ दे। ऐसा देखने के पहले ही मैं अपनी आँखें फोड़ लूँगा, अपना जान दे दूँगा...''

''रहम कीजिए मुझपर, मैं औरत हूँ! अपने कलेजे पर धार-दार छूरी और दिल पर नमक की छनछनाहट बरदाश्त नहीं कर सकूँगी—मैं कमजोर हूँ, बाबूजी! ...'' शमीम का गला अवरुद्ध हो गया अपने बेटे को अपने से दूर जाते देखकर आपका कलेजा टुकड़े-टुकड़े हो रहा है....जरा सोचिये, ख्याल कीजिए!.... आप मर्द होकर भी घबरा रहे हैं, तो इतना कमजोर दिल लेकर मैं कैसे यह बरदाश्त कर सकती हूँ कि मेरा खुदा इस तरह मुझसे दूर कर दिया जाय...''

''तुम सिर्फ अपनी मुहब्बत, अपना आराम देख रही हो—यह नही देखती कि तुम अपने साथ जयन्त की भी किस्मत बरबाद कर रही हो। सेठ का बेटा है वह। बाल्यावस्था से अब तक उसने किसी की एक बात भी सहन नहीं की एक मामूली सी कष्ट भी नहीं सहा उसने, वह तुम्हारे साथ तकलीफ के दिन और दुखभरी रातें कैसे व्यतीत कर सकता है? अब तक उसने पैसे से खिलवाड़ किया है, मोटर पर सैर की है, मगर तुम्हारे साथ वह दूसरों से भीख कैसे माँग सकेगा? पैदल कैसे चल सकेगा? तुम उसे बरबाद कर रही हो....''

''मैं उन्हें बरबाद कर रही हूँ, बाबूजी?''

''हाँ, बरबाद कर रही हो तुम उसे। वह तुम्हारे पीछे पागल हो गया है, तुम पर दीवाना हो रहा है, हम सबकी अवहेलना कर रहा है। वह तुम्हारे साथ शादी कर लेगा तो धर्म भ्रष्ट हो जायगा। फिर मेरा सारा धन, सारा ऐश्वर्य, सारा वैभव उसके काम न आ सकेगा! मैं ऐरे गैरों को अपना धन लुटा दूँगा, मगर अपने विद्रोही बेटे को एक फूटी कौड़ी भी न दूँगा तब वह भिखारी के अतिरिक्त कुछ नहीं रह जायगा, उसका फूल-सा मुखड़ा कुम्हला जायगा, उसकी देदीप्यमान मुखश्री नष्ट हो जायगी। रूखा-सूखा भोजन उसको खाने को मिलेगा, फटे-पुराने कपड़े वह

पहनेगा—वह भरी जवानी में बुड्ढा हो जायगा और इसका सारा दोष तुम्हारे सर पर होगा।"

"...." शमीम काँप उठी।

"एक बेबस इन्सान को तुम बरबादी के रास्ते पर ले जा रही हो, एक वैभवशाली खानदान की जड़ खोद रही हो तुम, तुम्हारा खुदा तुम्हें कभी न माफ करेगा। मेरा बिलख-बिलख कर रोना तुम पर गजब ढा देगा, कयामत बर्पा देगा..."

"चुप रहिये, चुप रहिये!" भय से शमीम ने अपनी आँखें मूँद लीं। सेठ केशवराव की आँखें हर्ष से चमक उठीं।

"तो तुम जयन्त को चाहती हो?"

"जी... अपनी जान से भी ज्यादा।"

'अपनी जान से भी ज्यादा?..."

शमीम ने सम्मतिसूचक सर हिला दिया।

"उसके लिए बड़े से बड़ा त्याग, उसके सुख के लिए अपनी सारी आकांक्षाओं का बलिदान कर सकती हो?"

"कर सकती हूँ—जरूर कर सकती हूँ! मेरी जान लेकर भी अगर उन्हें खुशी हासिल हो सके, राहत मिल सके—तो मैं तहेदिल से मौत का सामना करने के लिए तैयार हूँ..." शमीम सिसक रही थी। शिराज बुदबुदाता हुआ खड़ा था।

"उसके प्रेम से तुम नाता तोड़ लो, उसे पाने की आशा छोड़ दो। इसी में उसे सुख प्राप्त होगा, इसी में उसे राहत मिलेगी। बोलो, तैयार हो तुम? अपने प्रियतम के सुख के लिए अपने प्रेम का बलिदान कर सकती हो? अपने सनम की राहत के लिए अपना सर्वस्व निछावर कर सकती हो?"

"......." शमीम और न सुन सकी। वह सर पकड़ कर भूमि पर बैठ गई।

"इधर देखो! मैं बुड्ढा हूँ, तुम्हारे वालिद का दोस्त हूँ। हाथ जोड़ कर, घुटने टेक कर तुम्हारे सामने इज्जत की भीख माँगता हूँ, अपने बेटे को माँगता हूँ—तुमसे भीख माँगता हूँ,

शमीम ! मुझे निराश न करो। बोलो तैयार हो तुम..."

"तैयार हूँ !...." ये शब्द मानों उसकी कब्र से निकले। उसने अपना आँसुओं से सिक्त चेहरा ऊपर उठाया—"अगर मेरी बरबादी से आप आबाद हो सकें, तो मैं तैयार हूँ...." शमीम ने अपने आँसू पोंछ डाले। अपने हृदय की हाहाकारमयी वेदना को आँखों में प्रकट होने नहीं दिया। किस मुख से, किस वाणी से वह बताती कि इस समय उसके हृदय पर कैसा भीषण वज्रपात हुआ है? उसके अन्तस्थल में कैसा ध्वंसक संघर्ष मचा हुआ है?

"जयन्त अभी तक नहीं आया?....तुम लोग इसी जगह रहो, मैं अभी देख कर आता हूँ...." कहते हुए सेठ केशवराव बाहर चले गये।

"मिस शमीम ! भूल जाइये सब बातों को...." शिराज ने कहा।

"भूल जाऊँ...." शमीम रो पड़ी—"कैसे भूल सकती हूँ, मिस्टर शिराज ! सब कुछ भूल सकती हूँ, मगर उन्हें नहीं भूल सकती..." शमीम चुप हो रही। शिराज भी निस्तब्ध खड़ा रहा। एकाएक शमीम ने पूछा...."आप मुझे प्यार करते हैं, मिस्टर शिराज?"

"शिराज चौंक पड़ा इस सवाल से। उसके कन्धे अपने पेटेन्ट ढंग से हिल उठे—"आपका मतलब?"

"आपको दिली मुहब्बत है मुझसे?"

"जी हाँ? आपको जितना प्यार करता हूँ, उतना शायद ही किसी को मैंने प्यार किया हो –"

"यह पागलपन आपको कब से सवार हुआ?" शमीम के मुख पर घृणा की रेखा स्पष्ट हो आई।

"......" शिराज स्थिर खड़ा रहा। केवल एक बार उसने अपने कन्धे हिलाये !

"बोलिये !...चुप क्यों हैं ।"

'पागलपन कहती हैं आप इसे ?...." शिराज उतावली के साथ बोला—"दुनिया में पाक मुहब्बत करना क्या पागलपन है ? ....आप भूल रही है, मिस शमीम ! कि आपने भी मुहब्बत की है। दुनिया का कौन इन्सान ऐसा है, जिसने कभी मुहब्बत न की हो, फिर भी आप कहती हैं कि यह पागलपन है ? ताज्जुब है ! अफसोस है !...."

"यह क्या कहते हैं आप ?"

"मैं ठीक कह रहा हूँ ! मैंने आपसे प्यार किया है, मैंने आपको मुहब्बत की नजर से देखा है....मगर सफसोस ! औरों की तरह आप भी मेरे दिल की बात न समझ सकी, मिस शमीम ! आप ने भी मुझे बदनीयत ही समझ लिया। मेरे दिल में छिपी हुई पाक मुहब्बत को आपकी इन्सानी आँखें देख न सकीं..." शिराज रुका एक क्षण के लिए, फिर बोला—"मिस शमीम ! मैं दुनिया का सबसे ज्यादा बदकिस्मत इन्सान हूँ। मेरे चेहरे का चढ़ाव उतार, मेरे बात-चीत करने का ढंग, कुछ ऐसा खराब है कि लोगों की हमदर्दी मुझपर से जाती रहती है। मैं बहुत कोशिश करता हूँ कि अपनी बातचीत से लोगों की हमदर्दी हासिल करूँ, मगर नहीं हो पाता। उलटे लोग मुझ से नफरत करने लगते हैं..."

"आज से आठ साल पहले...." शिराज ने अपनी बात जारी रखी—"मेरी एक छोटी बहन थी, शबनम-सी खूबसूरत ! हम दोनों एक दूसरे को कितना प्यार करते थे, बयान से बाहर की बात है। मैं उस वक्त सिर्फ सात साल का था और वह थी दस साल की। जिस घड़ी उसे न देखता, मेरा दिल काँप उठता। अपनी प्यारी बहन को देखने के लिये बेताब हो उठता मैं। मगर खुदा का कहर !...." शिराज ने उमड़े हुए अश्रु-बिन्दुओं को रोकने का प्रयत्न किया—"एक दिन जब कि जोरों का पानी बरस रहा था और हवा की सनसनाहट के साथ बिजली कड़क रही थी, उसे

बुखार आया। बस गजब टूट पड़ा, कयामत आ गई। कजा के अजल का शिकार हो गई वह। मैं इतना रोया कि बेहोश होकर गिर पड़ा। अम्मी तो इसी अफसोस में राहें-अदम को रवाना हो गईं। अब्बाजान ने बहुत कोशिश की, मगर वह न बच सकी। आज भी उसके लिए मैं रोता हूँ, मिस शमीम!...." बेचारा शिराज सचमुच रो पड़ा—"जिस वक्त पहले-पहल आपको क्लब में मैंने देखा, मैं चौंक उठा? आठ साल पहले की याददाश्त चिनगारी बन कर मेरे दिलो-दिमाग को जलाने लगी। मुझे ऐसा लगा, मानो, मेरी बहन अब नई सूरत में बहिश्त से उतर आई है। सच कहता हूँ मिस शमीम! ठीक आप जैसी सूरत शक्ल थी उसकी, और आपके माथे पर का यह छोटा दाग, काश! आप मेरी ही बहन होतीं, मिस शमीम!" शिराज चुप हो रहा! उसकी आँखों में मानों करुणा झाँक रही थी।

शमीम के आश्चर्य का पारावार न रहा, उस युवक की बातें सुनकर!....तो आज तक क्या उसने उसे बहन की तरह मुहब्बत किया! कितना दुर्गम चरित्र है—इस अद्‌भुत युवक का।

"जब भी आपको दुखी देखता तो मुझे ऐसा मालूम होता, मानों मेरी बहन दुख दर्द से चीख रही है, इस लिए मैंने शुरू से ही आप में दिलचस्पी ली, आप को प्यार करने लगा। आपको बर-बादी की ओर जाते देखकर मैं आप को बचाने के लिए बेताब हो जाता हूँ। मैंने बहुत कोशिश की कि आप उस खौफनाक रास्ते पर पैर न रखें, मगर बदकिस्मती कि आप सम्हल न सकी। मेरी तरफ से बदख्याली जो आपके दिल में जम गई थी। मैं जानता था कि जयन्त से आपकी निभ नहीं सकती, इस ख्याल से मैं हमेशा आप लोगों की राह में आ खड़ा होता था। जयन्त को इसलिए फट-कारता था, मगर मेरी बात मानने की बजाय आप लोग मुझे खुदगर्ज बदकार न जाने क्या-क्या समझ बैठे, मगर हकीकत न आप लोगों

की बदनामी में मेरा कोई हाथ न था। आप लोगों का कसूर ही बदनामी का बायस बना ! आप लोग शायद भूल गये थे कि दुनिया अन्धी नहीं है और आप दोनों की मेल-मुहब्बत, उसकी आँखों में खटक सकती है। जो कुछ मैंने किया, आपको अपनी बहन समझ कर....''शिराज के नेत्रों के कोरों पर थे आँसुओं के कण और उसके मुख पर था गम्भीरता का भाव !

''आप फरिश्ते हैं...'' शमीम ने कहा। उसे महान पश्चाताप हो रहा था कि वह नेक दिल इन्सान को आज तक अपनी गलतफहमी से बदकार समझती चली आ रही थी।

''फरिश्ता !...'' वह हँस पड़ा एक फीकी हँसी ''एक नाकाबिल् इन्सान को आप फरिश्ता कहती हैं, मिस शमीम ! मैं फरिश्ता नहीं बदकिस्मत इन्सान हूँ, जिसके साथ दुनिया का कोई भी इन्सान हमदर्दी रखने वाला नहीं। मैं मुसलमान हूँ, एक सच्चा मुसलमान ! जो हमेंशा दूसरों की भलाई में गर्क रहता है—जो दूसरों की इज्जतों अस्मत पर बदनिगाह नहीं डालता, वहीं हूँ मैं, मगर दुनिया समझ नहीं सकती—''

शमीम की आँखों से आँसू छलछला आये। रो उठी उस अभागे युवक की किस्मत पर, जिसे इश्वर ने न जाने कैसी प्रकृति प्रदान की थी कि प्रथम दृष्टि में ही लोगों के हृदय में उसके प्रति घृणा का भाव उत्पन्न हो जाया करता था, मगर था वह एक पाक इन्सान !

''भाई शिराज ! मुझे माफ करना !....'' कहती हुई वह दौड़ कर शिराज के कन्धों से जा लगी। शिराज के गाल बहते आँसुओं से भीग गये। उसे लगा जैसे आज युगों की बिछड़ी हुई बहन उससे आ मिली है। उसके मुंह से टूटती हुई आवाज निकली—''बहन....'' और वह रो उठा।

* * *

सेठ केशवराव पुलिस की टैक्सी पर सवार होकर फिर मिसेज वर्मा की बंगले की ओर चले, जयन्त की खोज में। मगर कुछ ही

दूर जाने पर उन्होंने देखा कि जयन्त बेतहासा सायकिल भगाये उन्हीं की ओर को आ रहा है। और उसके पीछे पचासों मुसलमान हथियार लिए, दौड़े आ रहे हैं। जयन्त के शरीर पर जगह-जगह घाव हो गये हैं।

धांय धांय का शब्द हुआ और आगे के कई दंगाई जमीन पर लोटते नजर आये। पुलिस की टेक्सी देखकर दंगाइ तितर-बितर हो गये। जयन्त टेक्सी के पास बदहवास सा आकर गिर पड़ा। सेठजी मोटर से कूद पड़े—"जयन्त बेटा!"—उन्हों ने पुकारा।

"पिताजी!...आप?...." जयन्त आश्चर्य के साथ उठ खड़ा हुआ—"आप यहाँ कैसे?"

सेठ केशवराव कुछ न बोले। बेटे की दयनीय दशा देख कर उनका हृदय हाहाकार कर उठा— "अपनी दशा देख! ऐसे भयानक दंगे में तू बाहर क्यों निकला?...." उन्होंने कहा—"तेरा पागलपन अभी तक दूर न हुआ? अब वह तुझे नहीं चाहती बेटा!"

"कौन?...कौन पिता जी?" आश्चर्य-विस्फारित नेत्रों से जयन्त ने पूछा।

"वही...शमीम!"

"यह नहीं हो सकता!...यह कैसे हो सकता है, पिताजी?"——जयन्त लड़खड़ाती आवाज में बोला।

"अपने डेरे पर चल, सब पता चल जायगा....'

"ठीक उसी समय जयन्त अपने डेरे पर पहुँचा, जिस समय शमीम शिराज के कन्धे से जा लगी थी खुले दरवाजे की राह दूर से ही जयन्त ने यह दृश्य देखा। देखा, अपने हृदय में बसेरा डाले पंछी को दूसरे के हृदय में बसेरा डाले। सब कुछ देखा। उसके पैर लड़खड़ा गये? वह गिरते-गिरते बचा।

"बेटा!" सेठ केशवराव ने उसे संभाला।

"यह नहीं हो सकता, पिताजी !..." जयन्त पागल सा बोल उठा –"वह इतनी निष्ठुर नही हो सकती। वह मेरे साथ छल नहीं कर सकती। जिसके लिए मैंने सब कुछ किया, वह मेरे लिए क्या थोड़ा-सा दुःख नहीं सह सकती ?...आपने मेरी आँखों पर जादू कर दिया है--जादू ! मै चलकर उससे पूछता हूँ कि इस तरह मेरी दुनिया उजाड़ने का कारण क्या है ?"

"न जा बेटे ! अवन्नति के गर्त की ओर पैर न बढ़ा।"

"जाऊँगा पिताजी !...." और दौड़ता हुआ वह शमीम के सामने जा खड़ा हुआ "शमीम...." उसने उअरुद्ध कण्ठ से पुकारा

'सनम !...." दौड़ पड़ो सब कुछ भूल कर वह।

'शमीम !..." सेठ केशवराव की भयंकर गर्जना सुनाई पड़ी शमीम इस तरह चौंक पड़ी, मानों साँप छू गया हो। उसे अब अपनी प्रतिज्ञा का स्मरण हुआ। उसने अब जाना कि वह प्रियतम के भविष्य के लिए काँटे बो रही है।

एक क्षण में ही उसके भाव पतिबर्तन कर वह बोली—"तुम... तुम चले जाओ। भूल काओ मुझे।"

"ऐसा न कहो....मत कहो। भगवान के लिए ऐसा मत कहो, शमीम ! मेरे हृदय के टुकड़े टुकड़े न करो...."

"मैं तुम्हें नहीं चाहती तुम छली हो। मिसेज वर्मा के हाथ की कठपुतली हो तुम !—मैं तुमसे नफरत करती हूँ...." कह तो दिया शमीम ने, मगर उसका दिल खण्ड-खण्ड हो गया—हृदय की दावाग्नि आकाश छूने लगी सारा शरीर भयानक मानसिक वेदना से दग्ध होने लगा, मगर क्या करती वह ? जयन्त का दिल अपनी ओर से फेरने के लिए, सिवाय ऐसा कहने के कोई चारा ही न था।

जयन्त ! प्रस्तरवत् नेत्रों से शमीम के भोले चेहरे को देखता हुआ खड़ा था। वह खोज रहा था चन्द्र-छटा जैसी सुन्दरता के अन्त-

स्थल में अगम विषराशि कहाँ अन्तर्हित है, गुलाब जैसे सुन्दर मुख से यह आग कहाँ से निकल रही है ?

शमीम को कृतघ्नता देख, जयन्त का हृदय हाहाकार करने लगा—"शमीम !...." उसका हृदय क्रोध एवं घृणा से भर गया—"तुम विश्वासघातिनी निकली। खुदा का भी डर न लगा तुम्हें...."

"मुझे भूलने की कोशिश करना..."

"भूलने की !..." विषादपूर्ण हँसी हँस पड़ा वह—"तुम्हारी इस विश्वासघातकता को भूल नहीं सकता हूँ, मगर तुम्हें भूलना असम्भव है, शमीम ! काश इस गोरे चमड़े के भीतर यह कालिमा मण्डित हृदय न होता...." आवेग से जयन्त के पैर लड़खड़ाये और वह बेहोश होकर गिर पड़ा।

सेठ केशवराव की आज्ञा से सिपाहियों ने बेहोश जयन्त को टैक्सी में रखा और और घर का आवश्यक सामान लेने के पश्चात वे लोग स्टेशन की ओर चल पड़े। शिराज हतबुद्धि-सा खड़ा रहा। शमीम वज्राहत-सी कुर्सी पर बैठ गई।

"जिससे मैं डरता था वही अन्जाम हुआ...." शिराज नें ठण्डी साँस ली—"मगर आपने गलती की...."

"क्या करती ? अपनी राहत के लिए उनकी दुनिया कैसे उजाड़ देती। चलिए घर चला जाय, अब्बा इन्तजार करते होंगे। खुदा की मर्जी यही थी।"

शिराज ने गहरी साँस ली, मगर वह जानता था कि शमीम की इस असहाय वाणी में उसकी अगम वेदना अन्तर्हित है। उसने कितना बड़ा त्याग किया है, अपने सनम के लिए कुचल डाला है अपना कीमती दिल ! उन दोनों अभागे प्राणियों के विनाश का कारण है समाज का भयानक बन्धन, धर्म को दुरूह रूढ़ियाँ एवं दुनिया वालों का अन्धविश्वास।

शिराज ने आज पहली बार सोचा और दाँत पीस कर रह गया।

*

१८

"तुम वही शमीम हो ? जिसने एक दिन प्यार का सुनहरा दिन दिखाकर मुझे विनाश की ओर अग्रसर किया था, जिसने चन्द्रमा की स्वच्छ ज्योत्सना में मुझे 'सनम' कहकर पुकारा था, जिसने अपनी प्रेम-वर्षा से मेरा वीरान संसार हरा-भरा बना दिया था—वही हो तुम ?...." अपने घुटनों पर शमीम का फोटो रक्खे हुए जयन्त पागल-सा बड़बड़ा रहा था। आज वह अपने पिता के घर, अपने उसी सुसज्जित प्रकोष्ठ में बैठा हुआ है। उसकी आँखों में हैं आँसुओं की बूंदें और उसके सामने छाया हुआ है घनघोर अन्धकार ! उसी घनघोर अन्धकार में वह अपने तड़पते हृदय को सान्त्वना देने का व्यर्थ प्रयत्न कर रहा था।

वह कुर्सी पर से उठ खड़ा हुआ। फोटो हाथ में लिए हुए खिड़की के पास चला आया और खिड़की खोलकर बाहर के घनीभूत अन्धकार में आँखें फाड़कर देखने लगा दूसरे ही क्षण स्वतः बड़बड़ाया—"मेरे भाग्य-प्रदेश में भी अंधेरा छाया हुआ है, फिर भी तुम मुझे दिखाई पड़ रही हो, मेरी प्यारी शमीम !..." उसने चित्र की ओर देखा—"तुम आँखें खोलकर देखो, इस समय यावत जगत सुखद निद्रा में तल्लीन होकर स्वप्न-संसार में विचरण कर रहा है—और मैं ? तुम्हारा चित्र हाथ में लिए तड़प रहा हूँ—बोलो ! एक बार बोल दो, शमीम ! आह तुम हँस रही हो ?..." जयन्त के हृदय में आग-सी लग गयी उस फोटो की भोली मुस्कराहट देखकर—"मैं रो रहा हूँ, तुम हँस रही हो ! मैं तड़प रहा हूँ, तुम खुश हो रही हो। बेरहम ! बेवफा !"—दांत पीसा जयन्त ने—"अपने भोले चेहरे पर पर्दा डालो, अपनी हृदयवेधी मुस्कराहट बन्द करो....नहीं तो....नहीं तो...." तड़ाक ! भड़ाक !—विक्षिप्त जयन्त ने वह फोटो जोरों से जमीन

पर पटक दी। शीशा चूर-चूर हो गया, चित्र फट गया – 'अब हंसो! हंसो....खूब हंसो!''—चिल्ला उठा जयन्त।

''बेटा....'' सेठ केशवराव खड़खड़ाहट की आवाज सुनकर दौड़े आये वहाँ।

''आ गये पिताजी! आप भी आ गये! क्या चाहते हैं?.... मेरा संसार उजाड़ कर मेरे हृदयोद्यान के अंकुरित पौधों को विष-रस से सींच कर, अब आप क्या चाहते हैं?....मेरा रक्त!''

सेठ केशवराव कुछ न बोले। अपना मस्तक पकड़ कर खड़े रहे अपने पुत्र की करुणाजनक अवस्था देखते हुए।

* * * *

दिन पर दिन बीतते गये, मगर जयन्त के हृदय की ज्वाला शान्त नहीं हुई। उसके हृदय में जलती हुई विभीषिकामयी दाहक ज्वाला का शमन न हुआ। सेठ केशवराव अब तक उसके प्रेम को यौवन का उन्माद ही समझते आ रहे थे, मगर अब उन्हें भी जयन्त की दुर्दशा देखकर पश्चाताप हो रहा था।

''जमाल तुम!'' एकाएक सेठजी उछल पड़े, मिर्जा जमालुद्दीन एवं शिराज को घबड़ाये हुए आते देखकर—''तुम क्या करने आये हो?''

''आज शमीम महीनों से बिमार है। जयन्त को उसने बुलाया है....'' मिर्जासाहब रो पड़े। शिराज चुप खड़ा रहा।

''किसलिए बुलाया है?'' गरज पड़े सेठजी।

''जमाल चाचा!'' जयन्त का करुणामिश्रित स्वर सुनाई पड़ा।

''जयन्त बेटा....'' मिर्जासाहब दौड़े आये जयन्त के पास—''वह मर रही हैं बेटा! चलकर उसे बचा लो...''

''वह मर रही है?....'' जयन्त घबड़ाहट के साथ बोल उठा,

दूसरे ही क्षण उसके मुख पर क्षोभ का भाव परिलक्षित होने लगा। उसका हृदय ग्लानि से भर गया! उस दिन की बात याद हो आई, जिस दिन शमीम ने उसके प्रेम का कटु परिहास किया था और शिराज के गले में बाहें डालकर उसने कहा था—"मुझे भूल जाना ...." वही शमीम, आज उसे देखना चाहती है? आज उसके लिए मर रही है? यह भी परिहास ही है! उसके नेत्रों के सम्मुख अतीत के चित्र भयानक गति से आने-जाने लगे। मशान के कोने-कोने से तूफान-सा उठने लगा है, समग्र सृष्टि में जैसे हाहाकारमय कोलाहल उठ खड़ा हुआ है, ऐसा प्रतीत हुआ उसे। जयन्त ने अपनी आँखें मूँद ली—"मैं नहीं जा सकता, मैं नहीं जाऊँगा...." वह चिल्ला उठा।

"जयन्त बेटा! चलो, खुदा के लिए एक बार चलो। शमीम के मसीहा हो तुम! चलकर उसे बचा लो। बेटा! मैं शमीम की जान की भीख तुमसे माँगता हूँ...." धड़ाम से मिर्जासाहब जयन्त के पैरों पर गिर पड़े।

जयन्त ठठाकर हँस पड़ा। अट्टहास कर उठा। उसे सारी सृष्टि घूमती हुई मालूम दे रही थी। उसे लग रहा था, जैसे जगत में महाप्रलय मच रहा हो, दावानल संसार को भस्मीभूत कर रहा हो, जगत् के असहाय जीव त्राहि-त्राहि कर रहे हों—वह पागल-सा हँसने लगा जोरों से—तुम लोग मेरी हँसी उड़ा रहे हो। मैं नहीं जाऊँगा...."

"क्यों नहीं जायगा, दगाबाज? वह मर रही है और तू यहाँ खड़ा हुआ हँस रहा है!...." दौड़कर शिराज ने जयन्त का कन्धा पकड़ लिया और चट्ट-चट्ट उसके गालों पर उसकी हथेली जा पड़ी। जयन्त का सर चकरा गया। क्षण भर में ही उसके ज्ञानतन्तु वापस लौट आये—"क्या वह सचमुच पागल हो जायगा!"—वह सोचने लगा।

"मिस्टर शिराज" उसने कहा "मुझ पर रहम करो। वह तुम्हें चाहती है। तुम जाओ उसके पास। मुझे जलता हुआ छोड़ दो..."

"नादान दोस्त !" शिराज की आँखें डबडबा आईं उसकी गलतफहमी देखकर—"तुम गलती पर हो। समझ से काम लो। वह तुम्हारी है। आगे तुम्हारी हो होकर रहेगी।"

"शिराज ! ऐसा कहकर तुम जयन्त का भविष्य अन्धकारमय बना रहे हो।" सेठ केशवराव कुछ अप्रतिभ से होकर बोले।

जयन्त ने क्रुद्ध दृष्टि से पिता की ओर देखा और सेठ केशवराव के जीवन में आज यह प्रथम अवसर था, जब कि वे पुत्र की आँखों से आँख न मिला सके।

* * * *

शमीम के आँखों की ज्योति लुप्त हो रही थी। उसी धुँधले अन्धकार में शमीम ने देखा अपने प्रियतम का हँसता हुआ मुख, मानो पुकार रहा हो—"शमीम !"

"सनम् !" वह चिल्ला पड़ी।

"मै आ गया, आ गया शमीम ! पिता की आज्ञा पर लात मारकर मैं आया हूँ, वह भी मेरे पीछे दौड़े आ रहे हैं..." जयन्त दौड़ता हुआ शमीम की चारपाई पर गिर पड़ा—"तुमने मुझसे ऐसा छल क्यों किया, शमीम ? क्यों किया....?" वह रो पड़ा।

"छल ?...." शमीम के ज्योतिहीन नेत्र प्रकाशमान हो उठे—"छल तो तुमने किया था, सनम् !"

"नहीं शमीम....नहीं ! सारा अपराध मिसेज वर्मा का था। उसने धोखे से शराब पिलाकर मुझे अचेत कर दिया था...." जयन्त की आँखों से करुणा का श्रोत उमड पड़ा—"मैंने तुम्हारे लिए सब कुछ किया, शमीम ! मगर अफसोस ! तुम मेरे लिए कुछ भी न कर सकीं—शिराज के साथ...."

"भाई शिराज के लिए कोई बद अल्फाज मुँह पर न लाओ, सनम् !"

"भाई ?...."आश्चर्य से जयन्त चीख उठा—"शिराज तुम्हारा भाई ?....भाई है तुम्हारा ?...." उसके मुँह से अस्फुट शब्द निकल पड़े, परन्तु दूसरे ही क्षण वह चौंक पड़ा।

"सनम्...." शमीम के गले से रुकती हुई आवाज निकली और एक हिचकी के साथ उसकी आत्मा इस नश्वर शरीर को छोड़कर परलोक को चल बसी। जयन्त धड़ाम से पृथ्वी पर गिर पड़ा। सेठ केशवराव ने झुककर जयन्त का सर गोद में लेने की चेष्टा की, पर उठा न सके। उसका शरीर अकड़ गया था। पंछी बसेरा छोड़कर उड़ चुका था।

सेठ केशवराव रो पड़े जोरों से। उनकी धर्मान्धता ने आज जो दृश्य उपस्थित किया था, वह उन्हें प्रकाश दिखाने के लिए पर्याप्त था। वे दौड़कर मिर्जा साहब के गले से लिपट गये। दोनों के नेत्र से निकली हुई अश्रु धारा उनके कपड़ों पर टप-टप गिरने लगी।

"बिखर गया तेरे दिल का बसेरा, उड़ जा पंछी उड़ जा...."

विशाल जनपथ से जाता हुआ एक फकीर गा रहा था। आकाश मण्डल धूमिल वस्त्रसा गोधूलि के सहयोग से, कालिमा-मुखमण्डित सन्ध्या का आवाहन करने को प्रस्तुत था और क्षितिज के पास घिरी आती हुई काली अंधियारी हाहाकारमयी गर्जन करती हुई यावत् जगत् को ग्रसने जा रही थी।

जनपद से गाते हुए जा रहे फकीर की आवाज अब तक गूँज रही थी।

"बिखर गया तेरे दिल का बसेरा,
उड़ जा रे पंछी उड़ जा"

॥ समाप्त ॥



स्व० कुशवाहा 'कान्त'

सुप्रसिद्ध उपन्यासकार

स्व० कुशवाहा 'कान्त' का नाम आज से ३० वर्ष पूर्व हिन्दी उपन्यास जगत में उदित हुआ था। उस समय उनकी सरस-सशक्त लेखनी ने हिन्दी उपन्यास जगत में हलचल सी मचा दी थी। उनके उपन्यासों की संख्या सन् १९५२ तक मात्र ३५ ही थी। इन पैंतीसों उपन्यासों के प्रकाशित होते-होते वे अत्यधिक लोकप्रिय लेखक माने जाने लगे थे। उनकी अपूर्व लोकप्रियता, उनके निधन के २२ वर्षों के बाद भी रंच मात्र कम नहीं हुई है। इसका ज्वलंत प्रमाण है कि कुछ स्वार्थी लोगों द्वारा उनके नाम से जाली और नकली उपन्यासों का प्रकाशन कर उनके प्रेमी पाठकों तथा पुस्तक विक्रेताओं को ठगा जा रहा है।

अतः स्व० कुशवाहा 'कांत' के प्रेमी पाठकों से नम्र निवेदन है कि आप इस प्रकार की जाली और नकली पुस्तकें खरीदने से बचें। उनकी लिखी केवल ३५ ही पुस्तकें हैं, जिसकी सम्पूर्ण सूची प्रस्तुत पुस्तक के अन्दर के पृष्ठ पर अंकित है।

महान उपन्यासकार स्व० कुशवाहा 'कान्त' की सभी पुस्तकें पाकेट बुक्स आकार में अप्राप्य थीं। उनके प्रेमी पाठकों के निरंतर अनुरोध पर उनकी लोकप्रिय कृतियाँ जो अबतक पाकेट बुक्स आकार में नहीं प्रकाशित हुई थी, अब सुरुचिपूर्ण-आकर्षक पाकेट बुक्स आकार में सरस्वती पाकेट बुक्स द्वारा प्रकाशित कर उनके सभी प्रेमी पाठकों तक पहुँचाई जा रही हैं। प्रस्तुत पुस्तक उन्हीं लोकप्रिय उपन्यासों में से एक है जो आपके समक्ष प्रस्तुत है।

